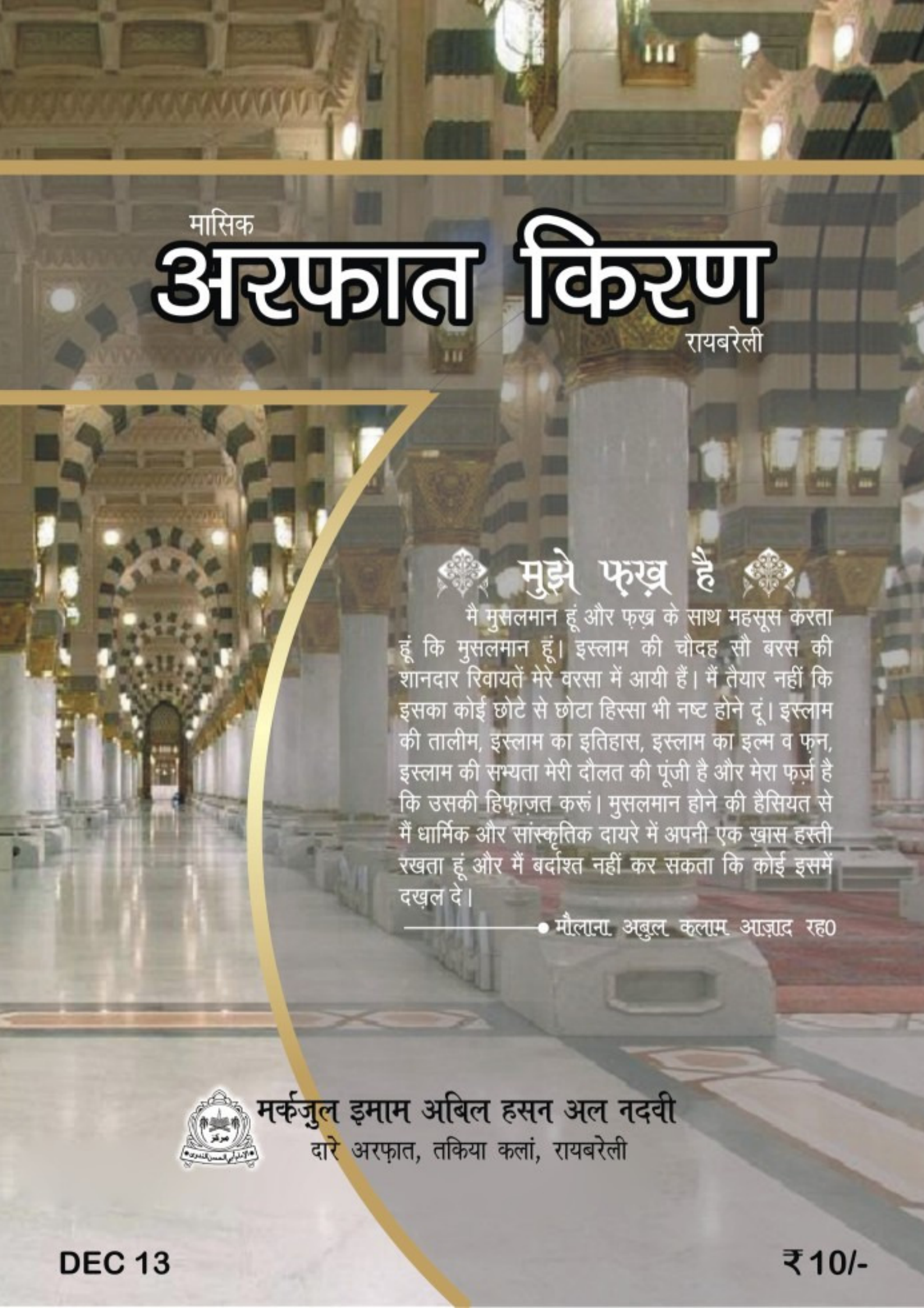

मासिक

अरफात किरण

रायबरेली

मुझे फ़ख़्र है

मै मुसलमान हूं और फ़ख़्र के साथ महसूस करता हूं कि मुसलमान हूं। इस्लाम की चौदह सौ बरस की शानदार रिवायतें मेरे वरसा में आयी हैं। मैं तैयार नहीं कि इसका कोई छोटे से छोटा हिस्सा भी नष्ट होने दूं। इस्लाम की तालीम, इस्लाम का इतिहास, इस्लाम का इल्म व फ़न, इस्लाम की सभ्यता मेरी दौलत की पूंजी है और मेरा फ़र्ज़ है कि उसकी हिफ़ाज़त करूं। मुसलमान होने की हैसियत से मैं धार्मिक और सांस्कृतिक दायरे में अपनी एक ख़ास हस्ती रखता हूं और मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई इसमें दख़ल दे।

● मौलाना अबुल कलाम आज़ाद रह0

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

DEC 13

₹10/-

सुनहरे कथन

हज़रत हसन बसरी रह०

❖धन की अधिकता से गुनाह बढ़ जाते हैं और ज़्यादा बोलने से गुनाह बढ़ जाते हैं।

❖आदमी के बड़प्पन की पहचान ये है कि अपने को छोड़कर हर व्यक्ति को बेहतर समझे।

❖गुनाह के बाद सच्ची तौबा से अल्लाह की क़ुरबत में बढ़ोत्तरी होती है।

❖दिल को अल्लाह के ज़िक्र और आख़िरत की फ़िक्र में लगाये रखने से दिल की सख़्ती दूर होती है।

❖शैतानी वसवसों को दूर करने के लिये अल्लाह का ज़िक्र और क़ुरआन की तिलावत बेहतर चीज़ है।

❖माल व दौलत को इज़्ज़त देने वाला ख़ुदा के यहां ज़लील होता है।

❖अक़्लमंद की ज़बान उसके दिल के पीछे होती है, हर बात से पहले वो इससे आज्ञा ले लेता है और जाहिल का दिल उसकी ज़बान की नोक पर होता है, जो बग़ैर सोचे–समझे बोल देता है।

❖दुनिया की मिसाल सवारी की तरह है, अगर इस पर तुमने सवारी की तो वो तुमको ऊपर उठायेगी और अगर तुमने उसको अपने ऊपर सवार कर लिया तो तुम बर्बाद हो जाओगे।

❖नेक आदमी से दोस्ती रखना मानो ख़ुदा से दोस्ती रखना है क्योंकि उसको देखकर अल्लाह याद आयेगा।

❖दुनिया के तलबगार को आख़िरत नहीं मिलती, और आख़िरत के तलबगार को दुनिया नहीं मिलती।

❖मुसलमान वो है जो अपने दिल को ख़ुदा के हवाले कर दे और किसी को तकलीफ़ न पहुंचाये।

❖अगर इन्सान को अपनी मौत याद रहे तो वो अनावश्यक कामों में न पड़े।

❖लालच बुरी बला है, इससे अगर किसी चीज़ में बढ़ोत्तरी होती तो इन्सान सबसे पहले अपनी उम्र को बढ़ाना चाहता।

❖बिगड़े हुए हालात तलवार से नहीं तौबा से बदलते हैं।

❖इन्सान का सबसे बड़ा दुश्मन उसका नफ़्स है जो शोहरत व दिखावे के फ़रेब में उसको बर्बाद कर देता है।

❖मोमिन की हंसी दिल की ग़फ़लत का नतीजा है, ज़्यादा हंसने से दिल मुर्दा हो जाता है।

❖मुसीबत वो नहीं जो आये और टल जाये, मुसीबत वो है जो क़यामत तक इन्सानों के सर से न टले।

❖लोगो की तबाही की बड़ी वजह उम्मीदें और ख़्याली मन्सूबे भी हैं।

❖मोमिन की शान ये है कि वो दीन के मामले में मज़बूत और साहबे ईमान व यक़ीन हो।

❖दौलत आने पर संतुलन का दामन नहीं छोड़ना चाहिये।

❖मोमिन वो है जो किसी की नफ़रत में उसका हक़ न मारे और मुहब्बत में हद से ज़्यादा न बढ़ जाये।

❖उस ईमान से कोई फ़ायदा नहीं जो यक़ीन से ख़ाली हो।

❖जो दुनिया में अपना निरीक्षण करता रहता है, क़यामत के रोज़ उसके हिसाब–किताब में आसानी होगी।

❖एक शख़्स की नफ़रत के बदले में हज़ार लोगों की दोस्ती भी अच्छी नहीं।

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

दिसम्बर २०१३ ई०

अंक:१२ वर्ष:७

इस अंक में:

इतिहास से सबक लीजिये..२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी
उम्मत के इख़्तिलाफ़ और उनका हल.............................३
मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
वोट – एक अमानत.. ५
मौलाना ख़ालिद सैफुल्लाह रहमानी
ब्याज का लेन–देन...७
मुहम्मद अमरीन महफूज़ रहमानी
निकाह में मेहर की ज़रूरत..९
मुफ्ती शोएब अहमद
मेरे लिये मेरा अल्लाह ही काफ़ी है..............................११
मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी
आलोचना जब सीमा पार कर जाये.............................१२
जनाब अबू हाजिर
औरतों का लिबास कैसा हो..१४
मुफ्ती मुहम्मद अहमद अली
एक सफ़र ऐसा भी...१६
मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़
कार्टून चैनल...१७
मुहम्मद जसीमुद्दीन निज़ामी
फय्याज़ी और सख़ावत के नमूने.................................१८
प्रोफ़ेसर सैय्यद मुहम्मद इज्तिबा नदवी
इस्लाम और पश्चिम की कशमकश................................१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

संरक्षक

हज़रत मौलाना सैय्यद
मुहम्मद राबे हसनी नदवी
अध्यक्ष – दारे अरफ़ात

निरीक्षक

मो० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेक्रेटरी– दारे अरफ़ात

सम्पादकीय मण्डल

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी
मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी
मो० हसन नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

प्रति अंक–10रु वार्षिक–100रु0
सम्मानीय सदस्यता–500रु0 वार्षिक

www.abulhasanalinadwi.org
FAX-0535-2211386
E-Mail: markazulimam@gmail.com

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

इतिहास से सबक़ लीजिये

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

संसार के उत्थान व पतन के इतिहास से जीवित क़ौमें हमेशा पाठ पढ़ती रही हैं। जो लोग आंख बन्द करके सफ़र करने के आदी होते है वो ठोकर पर ठोकर खाते हैं। उनकी सारी योग्यतांए अनुभवों की भेंट चढ़ जाती है और जो लोग बीते हुए अनुभवों से लाभान्वित होते हैं उनकी मन्ज़िल दूर होकर भी क़रीब हो जाती है। मुसलमानों के पतन की कहानी यूरोप के उत्थान से आरम्भ होती है। सलीबी जंगो में बार–बार पराजित होने के बाद पूरे यूरोप ने अपनी रणनीति बदली जो उनके सुनहरे इतिहास का आरम्भ बिन्दु है। फ़्रांस के राजा लुईस नवम् को जब मुसलमानों ने क़ैद कर लिया तो उसने एक वसीयत नामा लिखा जिसमें उसने स्पष्ट रूप से ये बात लिखी कि हम सैन्य शक्ति से कभी मुसलमानों को पराजित नहीं कर सकते इसका हमने बहुत अनुभव कर लिया। अब हमको रणनीति बदलने की आवश्यकता है और कुछ समय के लिये लगन के साथ अमली मैदान में आगे बढ़ने की आवश्यकता है। इस वसीयत नामे पर चौदहवीं सदी ईसवी से अमल शुरू हुआ और तीन सौ साल के अन्दर–अन्दर इस सफल प्रयास ने यूरोप को कहीं से कहीं पहुंचा दिया।

वर्तमान समय यद्यपि मुसलमानों के लिये ख़राब नज़र आ रहा है किन्तु ये समय इस्लामी जागरूकता का है और इसके प्रभाव दुनिया के अनेक हिस्सों में नज़र आ रहे हैं। विभिन्न देशों में राजनीतिक उलटफेर और सत्ता परिवर्तन विभिन्न रूपों में सामने आया है। मगर इनकी हैसियत बुनियादी नहीं है। अस्ल अन्दर का वो ठोस काम है जिसके परिणाम में ये जागरुकता प्रकट हो रही है। बनावटी एकता के बजाये अगर अन्दर की मेहनत लगातार की जाती रहेगी तो जल्द ही इंशाअल्लाह इससे बेहतर परिणाम सामने आयेंगे।

मुसलमान ये चाहते हैं कि गेंद उनके पाले में आ जाये मगर उसके लिये जिस मेहनत की ज़रूरत है उसकी ओर ध्यान कम दिया जा रहा है और ये एक बड़े ख़तरे की बात है। मुसलमान आज जहां पहुंचे हैं उसमें इसी मेहनत का हाथ है। जो मुसलमान चिन्तकों, उलमा और प्रचारकों ने की है। जिसमें उनकी अस्ल मेहनत दिल व दिमाग़ तक पहुंचने की है। जब तक दिलों में सही भाव और दिमागों में सही सोच पैदा नहीं होगी ज़ाहिरी सूरतों से कोई बड़ी उम्मीद नज़र नहीं आयेगी बल्कि ख़तरा वही है जो सामने आता रहता है कि सब कुछ होने के बाद ज़मीन अन्दर से खिसक जाती है। इस अन्दर की ज़मीन को मज़बूत करने की ज़रूरत है और जब तक वो ज़मीन अमली रूप से और मार्गदर्शन के आधार से मज़बूत न हो जाये उस वक़्त तक ज़ाहिरी बदलाव से कोई बड़ा फ़ायदा होना बहुत मुश्किल है।

हालात से सबक़ लेना और इतिहास से फ़ायदा उठाना जीवित क़ौमों का चलन रहा है। मुसलमानों को स्वयं अपने उत्थान व पतन के इतिहास से सबक़ लेने की आवश्यकता है। इसके लिये कारणों का निरीक्षण करके उसके प्रकाश में यात्रा को तेज़ करने की आवश्यकता है और जीवन के हर क्षेत्र में अपनी योग्यता सिद्ध करने की आवश्यकता है। अगर इस्लाम के प्रकाश में ये यात्रा जारी रहेगी और कुछ अर्से के लिये मुसलमानों में लगन के साथ इस काम में लग जाने का भाव पैदा हो जायेगा तो जल्द ही हालात बदलेंगे लेकिन इसके लिये धैर्य व धीरज और हौसला चाहिये। "हाथों पर सरसों न उगायी जा सकी है न उगायी जा सकती है" कई बार लम्बे अर्से की मेहनत व उपायों के बाद परिणाम सामने आते हैं। मेहनत करने वाले चले जाते हैं और उनकी आने वाली नस्लें इसका फल खाती हैं।

उम्मत के इख़्तिलाफ़ और उनका हल

मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

जब हम इस्लामी शरीअत पर ज़रा गहरी निगाह डालते हैं जो कि क़यामत तक चलने वाले दीन की शरीअत है और इस ज़मीन के सारे इलाक़ों के लिये है तो हमको इसके पीछे की हिकमत नज़र आती है जिससे इस्लामी शरीअत के अल्लाह की शरीअत होने का ऐसा सुबूत मिलता है जैसे दोपहर में सूरज के वजूद का। हुज़ूर स0अ0 ने दीन को आसान बताया और फ़रमायाः "दीन आसान है" और ये भी फ़रमाया कि इसको सख़्त बनाकर कोई अपना ज़ोर दिखाने की कोशिश करेगा तो हार जायेगा। इसीलिये संतुलित और आसान बात अपनाने की हिदायत दी गयी है ताकि दीन पर अमल करने में किसी को परेशानी न हो। अगर ये चीज़ न होती तो एक जगह दीन के कुछ हुक्मों पर आसानी से अमल होता और दूसरी जगह परेशानी हो जाती और इस दीन के पूरी दुनिया के लिये होने वाली बात पर और क़यामत तक रहने वाली बात सच न साबित होती। हुज़ूर स0अ0 ने दीन के जो हुक्म बताये हैं उनमें आवश्यकतानुसार छूट रखी गयी है और आप स0अ0 ने अमल करने में बहुत से कामों में अलग–अलग तरीक़े अपनाये और कई मौक़ो पर सहाबा रज़ि0 के काम करने के ढ़ंग में भिन्नता को स्वीकार किया। मानों की बहुत से कामों में उनके बहुत से एतबारों के आधार पर सहूलत व छूट की गुंजाइश रख दी, जिससे आवश्यकतानुसार फ़ायदा उठाया जा सकता है। इसी तरह ये भी हुआ कि आप स0अ0 के बहुत से कामों में अलग–अलग तरीक़े अपनाने या अलग–अलग हुक्म देने को अलग–अलग सहाबा रज़ि0 ने अपने–अपने मौक़ों पर अलग–अलग देखा तो अलग–अलग बयान भी किया। ऐसी सूरत में बिल्कुल शुरू के ज़माने में ऐसे हुक्मों के सिलसिले में जो किसी तरह का फ़र्क़ महसूस किया गया तो उनकी व्याख्या व उनको निश्चित करने में उलमा की रायों में भी कुछ फ़र्क़ हुआ, इसके नतीजे में बहुत से फ़िक़्ही मज़हब बन गये। लेकिन सबकी अस्ल एक है और उन सबका उद्गम स्त्रोत ख़ुद आप स0अ0 की कोई बात या काम है। आप स0अ0 की किसी बात या किसी काम में फ़र्क़ या अन्तर किसी भूल–चूक का नतीजा नहीं। अल्लाह का नबी जो शरीअत बयान करने वाला है वो भूल–चूक में कैसे पड़ सकता है? और जो शरीअत क़यामत तक के लिये दी गयी है उसमें कमी कैसे हो सकती है? अस्ल में ये अल्लाह तआला की तरफ़ से एक नेमत व रहमत है। हमें बहुत से मज़हबों की फ़िक़ में पानी की पाकी में सख़्ती मिलती है और बहुत से में छूट मिलती है। इसमें अगर एक ही पैमाने को लागू कर दिया गया होता तो जिन इलाक़ों में पानी की बहुत ज़्यादा कमी है वो बहुत परेशानी में पड़ते। अगर उनके लिये पानी के पाक होने की सख़्ती ज़रूरी कर दी गयी होती और जहां पानी की अधिकता है वहां के पाक होने में बहुत ज़्यादा छूट एक अनावश्यक बात होती। इसी तरह समन्दर के किनारे रहने वालों के लिये अगर पानी के बहुत कम प्रकार के जानवर ही निश्चित कर दिये जाते हैं तो उनको परेशानी होती जो कि समन्दर व पानी के केन्द्रों से दूर रहने वालों के क्षेत्रों में नहीं होती जहां इस सहूलत की न तो आवश्यकता है और न ही मांग है। हुक्मों में इस तरह का भिन्नता व वृहदता जो विभिन्न रिवायतों या सहाबा के अलग–अलग अमल से मिलता है और उसमें भिन्नता पायी जाती है, दरअस्ल इस्लाम की तरफ़ से मानवीय आवश्यकताओं में छूट और हर इलाक़े के लिये उसकी उपलब्धता हैं जो हमको इस भिन्नता में मिलती है जो आदेशों के वैचारिक अर्थों से विभिन्न धर्मों के फ़ुक़हा के यहां पाया जाता है और उनका उद्गम स्त्रोत हुज़ूर स0अ0 से मिलता है जो आप स0अ0 के अमल व हुक्म या उसी से अनुसार होने के कारण सब भिन्नता अपनी–अपनी जगह

पर हक़ हैं और ये अल्लाह तआला की तरफ़ से अस्ल छूट और नेमत है। जब मसलक पूरी दयानत व अमानत के साथ कुरआन व हदीस से लिया गया हो और लिया जाने वाला इल्म व खोज के लिहाज़ से भी हो और तक़्वा व लिल्लाहियत के साथ भी परिपक्व हो तो काम को गुमराही कैसे समझा जा सकता है? ज़्यादा से ज़्यादा इजतिहादी ग़लती (सम्पूर्ण ईमानदारी से की जाने वाली खोज के बाद होने वाली ग़लती) समझी जा सकती है और उस पर भी सवाब है। इस भिन्नता में किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं होना चाहिये और सिर्फ़ अपने को अहले हक़ और दूसरों को ग़लत न करार देना चाहिये। ये बात बहुत ध्यान देने की है। कुरआन मजीद में बनी इस्राईल के लगभग इसी तरह के विरोधाभास और अपने से भिन्न को तकलीफ़ पहुंचाने पर सख़्त नापसंदीदगी प्रकट की गयी है और मुसलमानों को एकता व इस्लामी भाईचारगी की पूरी ताकीद की गयी है।

लेकिन अफ़सोस की बात ये है कि सभी मसलकों के ये स्वीकार करने के बावजूद के अहले सुन्नत के प्राख्यात व प्रचलित फ़िक़ सब हक़ पर हैं, चाहे वो हनफ़ी हों, शाफ़ई हों और चाहे हम्बली हों या मालिकी, चाहे हम्बली फ़िक़ के अन्तर्गत हो जैसे सलफ़ी। लेकिन इन अलग–अलग फ़िक़्हों के मानने वाले मसलिकी पक्षपात में कई बार आपस में एक दूसरे से भिन्नता में ऐसी शिद्दत बनाने की कोशिश करते हैं जैसे कि मसला इस्लाम और कुफ़्र के बीच का हो और जैसे कि वही अकेले हक़ पर हैं और जो उनके मसलक के ख़िलाफ़ दूसरे मसलक का है वो बिल्कुल गुमराह है। और ये बात कई बार बहुत गंभीर स्थिति का रूप धारण कर लेती है। अतीत में भी ऐसा हुआ है और इस समय भी इस्लामी दुनिया में बहुत से लोगों में शिद्दत वाला रूझान नामुनासिब तरीक़े से उभरने लगा है। इस टकराव से ये उम्मत अकेली उम्मत नहीं रह जाती जबकि हर मसलक वाला अपने को अस्ल मुसलमान और दूसरे को गुमराह समझता है और कई बार ये दोनों एक दूसरे के पीछे नमाज़ तक नहीं पढ़ते। हालांकि कुरआन मजीद में और हदीस शरीफ़ में साफ़–साफ़ इशारे आयें हैं और ताकीद आयी है कि आपस में फूट न डालें। एक उम्मत बन जाओ। कुरआन मजीद में आया है:

"ये तुम्हारी उम्मत एक उम्मत है और मैं तुम्हारे रब की इबादत करता हूं।" (अलअम्बिया: 92)

और अम्बिया अलै0 के लिये ये अक़ीदा बताया गया है कि:

"हम किसी रसूल के दरमियान फ़र्क़ नहीं करते।" (बक़रह: 285)

हालांकि उनकी शरीअतों के हुक्मों मे अन्तर रहा है और मुसलमान को आपस में भाई–भाई बनकर रहने का हुक्म दिया गया है। भाई–भाई में जिस तरह मामूली चीज़ों में भिन्नता होती लेकिन उनके भाई होने में फ़र्क़ नहीं पड़ता। इसी तरह कुरआन व हदीस से ईमान व इख़्लास की विशेषता के साथ खोज का अमल अपनाने वाले को प्रयास व हक़ के अनुसार स्वीकार किया जायेगा। इसके साथ सम्मान का मामला किया जायेगा। चाहे हक़ीक़त के एतबार से उससे कोई इज्तिहादी ग़लती हुई हो। हमारे बुज़ुर्गों ने इसी की पाबन्दी की है। इसकी बहुत सी मिसालें मिलती हैं।

इमाम इब्ने तैमिया रह0 ने अपने मजमूआ फ़तावा में इसको तफ़सील व ताकीद के साथ बयान किया है। और हमको अपने इक़्तिदा के लायक़ बुज़ुर्ग के आपस में इख़्तिलाफ़ करने और अपनी–अपनी राय पर जम कर बात करने के बावजूद आपस में मुहब्बत के साथ रहने और मामला करने की ख़ासी मिसालें मिलती हैं। इमाम शाफ़ई रह0, इमाम अहमद बिन हम्बल रह0 और दूसरे लोगों के हालात देखिये तो वो आपस में इसी रवादारी पर अमल करते रहे हैं। ज़रूरत है कि इस तर्ज़ को क़ायम रखा जाये। वरना हर मसलक अपने को अस्ल हक़ पर समझेगा और दूसरे के हर मसलक को गुमराह समझेगा और इस तरह दीन इस्लाम एक छोटे से मसलक में संकुचित होकर रह जायेगा जो किसी तरह आख़िरी नबी स0अ0 की क़यामत तक रहने वाली इस महान उम्मत के लिये सही नहीं है। दीन की बुनियादों पर एकमत होने के साथ ऊपरी कामों में भिन्नता आपस में दुश्मनी का कारण नहीं बनना चाहिये। इसको सारे सहमति देने वालों और सारे उलमा–ए–अस्लाफ़ ने स्वीकार किया है, बल्कि उस पर अमल किया है।

वोट एक अमानत

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

इन्सान आज़ाद पैदा हुआ है, इसलिये आज़ादी उसकी फ़ितरत में है। ग़ुलामी उसके लिये सबसे ज़्यादा तकलीफ़ देने वाली है। चाहे उस ग़ुलामी के साथ उसकी जिस्मानी राहत का कितना भी सामान एकत्रित कर दिया जाये। ठीक ऐसे ही जैसे किसी परिन्दे को सोने के पिंजड़े में क़ैद किया जाये। इस आज़ादी के लिये हमारे बुज़ुर्गों ने जिहाद किया और अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तान छोड़ने पर मजबूर किया। आज हमारा देश आज़ाद है। हम खुद इसके मालिक हैं और इसकी तक़दीर के फ़ैसले में शामिल हैं। ये आज़ादी अल्लाह की बड़ी नेमत है। हम आज़ाद होकर अपने कामों व ख़्यालों का इज़हार कर सकते हैं। हम जिस बात को ग़लत समझें उसे ग़लत कह सकते हैं। हम उन लोगों की पकड़ कर सकते हैं जो सत्ता पर क़ाबिज़ हैं। हम अपने धर्म का प्रचार कर सकते हैं और हिदायत से महरूम लोगों को सच्चाई का रास्ता दिखा सकते हैं।

इस गणतन्त्र का एक हिस्सा "चुनाव" है जिसमें देश की जनता अपने लिये अपनी पसंद का प्रतिनिधी चुनती है, जो संसद में उनके दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हैं और देश के अच्छे व बुरे के बारे में फ़ैसला करते हैं। बुनियादी तौर पर तो इस्लाम "चुनाव" में उम्मीदवारी का क़ायल नहीं, आप स०अ० ने फ़रमाया, "जो व्यक्ति किसी पद या ज़िम्मेदारी का तलबगार होगा मैं उसे वो ज़िम्मेदारी हवाले नहीं करूंगा।" इसलिये लोगों से वोटों की भीख मांगना और इच्छा जताना कि हमें इस ज़िम्मेदारी के लिये चुन लो, स्वयं में एक ग़ैरइस्लामी बल्कि अव्यवहारिक ढ़ंग है। होना ये चाहिये कि स्वयं लोग उससे प्रार्थना करें कि वो इस ज़िम्मेदारी को क़ुबूल कर ले, लेकिन मुश्किल ये है कि पश्चिमी गणतन्त्र में हर चीज़ की गुंजाइश है सिवाये व्यवहारिक दृष्टिकोण के। इसलिये खुद उम्मीदवार बनने के सिवा चारा नहीं, वरना सारे ही ख़राब लोग राजनीति की इस रेल में सवार हो जायेंगे।

लोकतन्त्र में जहां बहुत सी ख़ूबियां हैं, वहीं कुछ कमियां भी हैं। इस्लाम उन कमियों के सुधार के साथ उनको क़ुबूल करता है, सबसे बड़ी कमी ये है कि हमारे देश में चुनाव में भागी दारी करने और जन प्रतिनिधी चुने जाने के लिये न ज्ञान शर्त है न व्यवहार व बद्धिमता की आवश्यकता। पहले लोग इसका रोना रोते थे, कि जाहिल और कम पढ़े–लिखे लोग चुन लिये जाते हैं और देश की भावुक समस्याओं का फ़ैसला कमज़ोर लोगों के हवाले होता है। हमारे देश में बहुत से ऐसे जनप्रतिनिधी भी हैं जो हस्ताक्षर करने में भी असमर्थ हैं और अंगूठे से ही काम चलाते हैं। अब बात इससे भी आगे जा चुकी है और बड़ी संख्या में ऐसे तत्व क़ानून बनाने की कमेटी में पहुंच रहे हैं जो नामज़द और नामवर मुजरिम हैं। उन पर हत्या, बलात्कार व रहज़नी के खुल्लम खुल्ला मामले दर्ज हैं। पहले पुलिस गिरफ़्तारी करने के लिये उनका पीछा करती थी, अब उनकी सुरक्षा के लिये उनके पीछे–पीछे रहती है। भ्रष्टाचार और राजनीति का अब चोली–दामन का साथ है और अब किसी भी नेता के बारे में इस काम की ख़बर सुनकर आम नागरिक को कोई हैरत नहीं होती, क्योंकि ये अब रोज़ की बात है।

जो लोग चुनाव में खड़े होते हैं उनमें शायद एक प्रतिशत भी ऐसे नहीं जो वास्तव में ईमानदार हों। जिनकी ज़िन्दगी पाक व साफ़ हो और जनता की सम्पत्ति में कमी व ज़्यादती करने का इरादा लेकर इस मैदान में न उतरे हों। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद बारह साल भारत के राष्ट्रपति रहे और जब पदच्युत होकर अपने घर पटना गये तो उनके पास रहने के लिये कोई मकान भी नहीं था। जवाहर लाल नेहरू दारुलमुसन्निफ़ीन आज़मगढ़ के सदस्य थे।

उस समय सदस्यता शुल्क पांच सौ रूपये था, जब मौलाना मसऊद अली नदवी नेहरू जी से सदस्यता शुल्क लेने गये, तो उनके पास पांच सौ रूपये भी पूरे न हो सके और दो क़िस्तों में फ़ीस अदा की और अपनी पास बुक दिखाई जिसमें ढ़ाई सौ रूपये से ज़्यादा न थे। लेकिन आज साधारण से जनप्रतिनिधी के महलों पर क़ैसरशाही के घर की ज़ेबाइश व आराइश होती है और उन्हें देखकर "जन्नत–ए–शद्दाद" होने का गुमान होता है और पुलिस छापा डालती है तो मनो सोने के ज़ेवरात उनके मकानों से बरामद होते हैं।

इन हालात में वोट देना और अपने मत से लाभान्वित होना जहां क़ौमी कर्तव्य है, वहीं मुसलमानों के लिये धार्मिक कर्तव्य भी है। ताकि ऐसे प्रतिनिधी चुने जा सकें जो नेक किरदार और व्यवहारिक मूल्यों के हामी हों, जो भ्रष्ट राजनीति पर यक़ीन न रखते हों और देश के धर्मनिरपेक्ष किरदार हेतु मुख़लिस हों। वो चढ़ते सूरज की पूजा न करते हों, बल्कि हक़ और सच्चाई के तरफ़दार हों। वर्तमान समय में पूरे ईमानदार और पाक व साफ़ किरदार के हामी राजनेताओं की तलाश हथेली पर सरसों उगाने से कम नहीं। शरीअत का उसूल है कि जहां "बेहतर" न मिले, वहां सबसे कम ख़राब को अपनाया जाये। इसलिये मौजूदा हालात में यही कहा जा सकता है कि ऐसे उम्मीदवार को वोट दिया जाये, जो देश की विभिन्न इकाइयों को एक नज़र से देखता हो, फ़िरक़ापरस्त न हो और नेक किरदार वाला हो वो कम से कम दो बुरे लोगों में से कम बुरा हो।

वोट की हैसियत दरअस्ल शहादत और गवाही की है। आप जब किसी उम्मीदवार के हक़ में वोट देते हैं तो मानों आप इस बात की गवाही देते हैं कि सभी उम्मीदवारों में यही शख़्स आपके निकट अपनी दयानत व अमानत, जज़्बा–ए–ख़िदमत व प्रतिनिधित्व की योग्यता में औरों से बेहतर और क़ौम व देश के लिये लाभदायी है। किसी व्यक्ति की ईमानदारी पर यदि आपको भरोसा न हो, आपको पता हो कि ये भ्रष्ट है और क़ौम की ख़िदमत के बजाय अपनी और अपने ख़ानदान की सेवा ही उसका उद्देश्य है। इसके बावजूद आप उसे वोट दें, या लोगों में उसका प्रचार करें, तो अल्लाह के यहां आप इस बारे में जवाबदेह होंगे। इसमें झूठी गवाही देने का काम होगा। यू तो हर झूठ बुराई है, लेकिन झूठी गवाही का गुनाह, गुनाह की सभी सूरतों से बढ़कर है। रसूलुल्लाह स०अ० ने इसे बहुत बड़े गुनाहों में से एक गिनाया है।

वोट में उम्मीदवार की योग्यता और किरदार के बजाय केवल इस बात को स्तर बनाना कि ये हमारे मुहल्ले का है, हमारे इस व्यक्ति से संबंध हैं, इसने हमारा फ़लां ज़ाती काम कर दिया था, ये वोट देने के लिये हमें पैसे दे रहा है, ठीक नहीं है। ये झूठी गवाही है और ये पैसे रिश्वत हैं। हर व्यक्ति को इस बारे में अल्लाह के यहां जवाब देना है। ऐसा व्यक्ति एक–दो नहीं बल्कि पूरी क़ौम के साथ बुरे काम का करने वाला है। इसलिये वोट के बारे में ख़ूब सोच–समझ कर फ़ैसला करना चाहिये। सभी उम्मीदवारों पर ग़ौर करना चाहिये। इसकी पिछली ज़िन्दगी और आम लोगों के साथ इसके बर्ताव और रवैये का भी जायज़ा लेना चाहिये और फिर जिस उम्मीदवार को बेहतर समझता है उसके हक़ में वोट देना चाहिये। वोटर के लिये भी यही अस्ल कामयाबी है। जिसके हक़ में उसने वोट का इस्तेमाल किया है, अगर वो हार गया तब भी वोट देने वाला अपने धार्मिक कर्तव्य और क़ौमी ज़िम्मेदारी से बरी है। वो अल्लाह के यहां ख़यानत करने वाला न गिना जायेगा और अगर ऐसे उम्मीदवार को वोट दिया जाये जो क़ौम के लिये लाभदायक नहीं हानिकारक है तो चाहे वो उम्मीदवार जीत जाये फिर भी वो एक मुसलमान वोटर के लिये ये हार ही है। क्योंकि वो अपने ग़लत काम की वजह से अल्लाह के यहां जवाबदेह है और ख़ुदा के तराज़ू में उसका ये काम क़ाबिले पकड़ है।

यूरोप का व्यवहार

"यरोप के व्यवहार में संतुलन नहीं है। उनकी मिसाल वही है कि गुड़ खायें और गुलगुलों से परहेज़। लोगों के छोटे–छोटे मामलों में वो बड़ी ईमानदारी से काम लेते हैं, लेकिन जब अपनी क़ौम की मसलहत की मांग होती है तो ये ईमानदार लोग क़ौमों को निगल जाते हैं। व्यक्तिगत जीवन में इनका हाल ये है कि अगर नौ बजकर बारह मिनट पर आने का वादा करें तो ठीक उसी वक़्त पहुंचे, लेकिन क़ौमी मामले में दूसरी क़ौम को धोखा देने में भी उन्हें ज़रा आर नहीं।" हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी रह०

ब्याज का लेन–देन

मुस्लिम समाज का ख़तरनाक नासूर

मुहम्मद अमरीन महफ़ूज़ रहमानी

कुरआन पाक व हदीस में है कि जिन गुनाहों पर सख़्त वईद आयी है और जिन्हें हलाकत व बर्बादी और दुनिया व आख़िरत की ज़िल्लत व रुस्वाई की वजह बताया गया है उनमें से एक बड़ा गुनाह ब्याज का लेन–देन है। ये इतना बड़ा गुनाह है कि इन्सान को ईमान से दूर और कुफ़्र से क़रीब कर देता है और कमज़ोर इन्सान को ताक़तवर परवरदिगार के मुक़ाबले में खड़ा कर देता है। सूरह बक़रा में अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमायाः

"ऐ लोगों जो ईमान लाये हो! खुदा से डरो और जो कुछ तुम्हारा सूद लोगों पर बाक़ी रह गया है, उसे छोड़ दो, अगर वाक़ई तुम ईमान लाये हो। लेकिन अगर तुमने ऐसा न किया तो आगाह हो जाओ कि अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से तुम्हारे ख़िलाफ़ जंग का ऐलान है। अब भी तौबा कर लो तो (और ब्याज छोड़ दो) अपनी पूंजी लेने के अधिकारी हो। न तुम जुल्म करो न तुम पर जुल्म किया जायेगा।"

हर कुरआन पढ़ने वाला इस हक़ीक़त को जानता है कि किसी बड़े से बड़े गुनाह के सिलसिले में भी कुरआन मजीद में ऐसे सख़्त शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है जो ब्याज के लेन–देन के सिलसिले में उपरोक्त आयत में इरशाद फ़रमाये गये हैं। हदीस शरीफ़ में इस गुनाह को बड़े सख़्त शब्दों में बयान किया गया है। तिबरानी की रिवायत है, हुज़ूर अकरम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः "ब्याज का एक रूपया (दिरहम) अल्लाह के निकट 33 बार बदकारी (व्याभिचार) करने से ज़्यादा सख़्त गुनाह है और बदकारी भी हो वो जो इस्लाम की हालत में की गयी हो।" एक दूसरी हदीस में इरशाद हैः "ब्याज के 72 वर्ग हैं जिनमें सबसे छोटा दर्जा अपनी मां से बदकारी करने की तरह है और सबसे ज़्यादा बुरा ब्याज अपने भाई की इज़्ज़त से खिलवाड़ करना है।"

ब्याज का लेन–देन करने वालों और ब्याज में किसी भी तरह से लिप्त होने वालों के लिये दुनिया व आख़िरत की सख़्त से सख़्त सज़ाएं बतायी गयी हैं। ऐसा इसलिये है कि उन सज़ाओं का डर अपने अन्दर पैदा करके ईमान वाले अपने आप को इस बड़े गुनाह से बचाएं।

सूखे का अज़ाबः आप स0अ0 ने स्पष्ट शब्दों में ये वास्तविकता बयान फ़रमायी कि जिस बस्ती और जमाअत में ब्याज का लेन–देन आम हो जायेगा अल्लाह तआला उस पर सूखे का अज़ाब डालेंगे। सूखे का मतलब बारिश रुक जाना भी हो सकता है और बारिश की इतनी अधिकता की फ़सलें बर्बाद हो जायें या बारिश संतुलित हो कोई दूसरे कारण पैदा हो जायें जिनके आधार पर अनाज महंगे और मनुष्य की क्रय शक्ति से बाहर हो जाये। हदीस शरीफ़ का अनुवाद ये हैः "जिस क़ौम में भी ब्याज का लेन–देन आम होता है उन्हें सूखे के अज़ाब में डाला जाता है और जहां रिश्वत का चलन होता है उन्हें दुश्मनों के रोब के ज़रिये अज़ाब दिया जाता है।" (अत्तरग़ीब व तरहीबः जिल्दः 3 पृ:5)

लानतः हदीस शरीफ़ में ये बात इरशाद फ़रमायी गयी कि ब्याज का व्यापार करने वालों और किसी भी तरह से ब्याज के लेन–देन में लगे हुए लोगों पर अल्लाह तआला और उसके पाक रसूल स0अ0 लानत करते हैं। लानत का मतलब अल्लाह की रहमत से दूर हो जाना है। ईमान वाले अल्लाह की रहमत के सहारे ही जीते हैं। अगर खुदा की रहमत का हाथ उठा लिया गया तो हर तरह की परेशानी और मुसीबत का सामना उन्हें करना पड़ेगा। ये बात भी चर्चा योग्य है कि एक तो अल्लाह की लानत (फिटकार) ब्याज का कारोबार करने वालों पर है और फिर ये भी कि हुज़ूर स0अ0 की ज़बान से लानत के शब्द कहलवाये गये हैं जिससे लानत में बहुत ज़्यादा सख़्ती पैदा हो गयी है। रिवायत में है किः "अल्लाह के रसूल स0अ0 की लानत है ब्याज लेने वाले पर, ब्याज देने वाले पर, ब्याज लिखने वाले पर और ब्याज के मामले में गवाही देने वाले पर।" आप स0अ0 ने ये भी इरशाद फ़रमाया कि ये सब गुनाह बराबर हैं। (मुस्लिम शरीफ़ः 1219)

इसी तरह मुसनद अहमद की रिवायत में आप स0अ0 का इरशाद हैः "अल्लाह की लानत है ब्याज लेने वाले पर, ब्याज देने वाले पर, ब्याज की गवाही देने वाले पर, और ब्याज लिखने वाले पर। जिस क़ौम में भी ये ब्याज और ज़िना का गुनाह आम होता है वहां के रहने वालों पर अल्लाह तआला का अज़ाब नाज़िल होता है।" (मुसनद अहमदः 402)

तबाही व बर्बादी: क़ुरआन पाक में अल्लाह तआला का ये इरशाद है कि "अल्लाह तआला ब्याज को मिटाता है और सदक़े को बढ़ाता है।" (सूरह बक़रा: 276)

हदीस शरीफ़ में इसकी व्याख्या यूं की गयी है: "ब्याज चाहे कितना ही ज़्यादा क्यों न हो उसका अन्जाम कमी है।" (मुसनद अहमद: 424) आयत व रिवायत से ये बात साफ़ होती है कि ब्याज का लेन–देन करने वाले अगर ज़ाहिरी तरक़्क़ी करते हुए नज़र आयें और उनका कारोबार फलता–फूलता दिखाई दे तो धोखे में नहीं पड़ना चाहिये कि ब्याज के लेन–देन करने पर उनकी उन्नति हो रही है और उनका कारोबार बढ़ता और फैलता जा रहा है। सामयिक रूप से किसी चीज़ का उन्नति करना इस बात की पहचान बिल्कुल नहीं है कि वो चीज़ हमेशा फलती फूलती रहेगी और कभी उसे पतन का सामना नहीं करना पड़ेगा। जिस चीज़ के मिटाने का फ़ैसला अल्लाह पाक ने फ़रमाया है उसका अन्जाम, नुक़सान और समाप्त हो जाना बताया गया है। वो मिट कर और ख़त्म होकर रहेगी चाहे कुछ दिनों तक उसे फलने–फूलने का मौक़ा दिया जाये। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (जिसका अधिकतर आधार ब्याज की व्यवस्था पर आधारित है) जिस प्रकार एक समय विशेष तक उन्नति करने और फलने फूलने के बाद पतन का शिकार हुई और जो कुछ हालात आज मीडिया के द्वारा हम तक पहुंच रहे हैं उन्हें पढ़ने के बाद कलाम–ए–पाक और हदीस शरीफ़ की बयान की हुई बातों को समझना आसान हो जाता है।

अल्लाह का अज़ाब: ब्याज का लेन–देन ऐसा संगीन गुनाह है जिस पर कई तरह के सख़्त तरीन अज़ाब की वईद हदीस शरीफ़ में मिलती है। इनमें ज़मीन में धंसा दिया जाना और आसमान से पत्थरों की बारिश होना और बहुत सख़्त आंधी का अज़ाब शामिल है। हदीस शरीफ़ में इस तरह से इसको और साफ़ किया गया है: "मेरी उम्मत का एक तबक़ा ऐसा होगा जिसके लोग ख़ूब खा–पीकर और मौज मस्ती करके रात को सोयेंगे लेकिन जब वो सुबह उठेंगे तो उनकी शक्लें बन्दरों और सुअरों की होंगी और उन पर अज़ाब ज़रूर आकर रहेगा। यहां तक कि जब लोग सुबह उठेंगे तो कहेंगे कि आज रात फ़लां क़बीले को ज़मीन में धंसा दिया गया और आज फ़लां आदमी के मकान को ज़मीन में धंसा दिया गया और उन पर ज़रूर आसमान से पत्थरों की बारिश बरसायी जायेगी। उन क़बीलों पर और उनके घरों पर और उन लोगों पर ज़रूर सख़्त आंधी भेजी जायेगी जिसने क़ौमे आद व क़ौमे लूत को उनके क़बीलों और घरों समेत तबाह कर दिया था। (ये सख़्त अज़ाब उन पर गुनाहों की वजह से भेजे जायेंगे) (1) शराब पीना (2) रेशमी कपड़ा पहनना (3) गाने बजाने के यंत्रों को अपनाना (4) ब्याज का लेना–देना (5) रिश्तेदारी को ख़त्म करना।" (अत्तरग़ीब वत्तरहीब: 8–9)

क़ौमे लूत व आद पर आने वाले जिस अज़ाब का हवाला ऊपर की हदीस में दिया गया है उसे क़ुरआन मजीद की सूरह हूद, सूरह क़मर और सूरह हाक़्क़ा में स्पष्ट रूप से बयान किया गया है।

क़ुरआन पाक की एक आयत और एक हदीस शरीफ़ में ब्याज के लेन–देन में आख़िरत में मिलने वाली सज़ा के बारे में बताया गया है। सूरह बक़रा की आयत 275 में इरशाद फ़रमाया गया है: "जो लोग ब्याज खाते हैं क़यामत के दिन वो इस तरह खड़े होंगे जैसे आसेब ज़दा दीवाने शख़्स खड़े होते हैं।" आप स0अ0 ने इसको यूं फ़रमाया है कि "जो कोई ब्याज खायेगा क़यामत के दीवाना उठाया जायेगा।" फिर आप स0अ0 ने दलील के लिये क़ुरआन मजीद की आयत तिलावत फ़रमायी। आख़िरत की दूसरी सज़ा "हदीस–ए–मेराज" में बयान की गयी है। आप स0अ0 फ़रमाते हैं:"(मेराज के सफ़र में) जब मैं सातवें आसमान पर पहुंचा और ऊपर की ओर निगाह उठाई तो वहां सख़्त बिजली की कड़क और गरज सुनाई दी, फिर मुझे एक ऐसी जमाअत दिखाई गयी जिसके पेट हवेलियों की तरह थे और उसमें सांप भरे हुए थे जो बाहर से नज़र आते थे। ये देखकर मैंने जिब्राईल से पूछा ये कौन लोग हैं (जिन्हें ऐसी सख़्त सज़ा दी जा रही है)? हज़रत जिब्राईल ने कहा कि ये ब्याज खाने वाले लोग हैं।"

पिछली लाइनों में ब्याज के लेन–देन के सिलसिले में दुनिया व आख़िरत की जो सज़ाएं बतायी गयी हैं उन पर ग़ौर किया जाये तो ये बात साफ़ तौर पर सामने आयेगी कि ब्याज ऐसा ख़तरनाक गुनाह है जिसकी वजह से दुनिया व आख़िरत दोनों जगह में ब्याज खाने वाले की ज़िन्दगी तबाह कर दी जायेगी। (शेष पेज 16 पर)

निकाह में मेहर की ज़रूरत और उसकी शरई हैसियत

मुफ़्ती शोएब अहमद

मेहर निकाह का एक ज़रूरी हिस्सा है। मेहर के बग़ैर निकाह नहीं हो सकता। कुरआन करीम की आयत–ए–करीमा इसकी दलील है। हां शरीअत में इसकी कोई मात्रा निश्चित नहीं।

इस शरई हुक्म के अलावा उलमा ने निकाह में मेहर के लाज़िम होने की बहुत सी मसलहतें और हिकमतें भी बयान की हैं। इसीलिये मुसनदुल हिन्द इमाम शाह वली उल्लाह देहलवी रह0 ने अपनी किताब "हुज्जतुलाहुल बलाग़ा" में इसकी बहुत सी मसलहतें लिखी हैं। हम इसकी शरह "रहमतुल्लाहिल वासेआ" लेखक हज़रत मौलाना मुफ़्ती सईद अहमद शेखुल हदीस दारुल उलूम देवबन्द से इसका खुलासा नक़ल करते हैं:

पहली मसलहत तो ये कि मेहर से निकाह स्थायी हो जाता है क्योंकि निकाह एक वक़्ती ज़रूरत नहीं बल्की हमेशा की ज़रूरत होती है। और ये स्थायी आवश्यकता उस वक़्त पूरी होगी जब मियां–बीवी स्थायी साथ का अपने को आदी बनायेंगे। औरत की ओर से तो उसकी पूर्ति इस प्रकार होती है कि ईजाब कुबूल के बाद औरत बंध जाती है और पाबन्द हो जाती है, अब निकाह से निकलना उसके बस के बाहर हो जाता है। दूसरी तरफ़ मर्द बिल्कुल अख़्तियार वाला और आज़ाद हो जाता है कि जब चाहे उसे तलाक़ देकर निकाह से अलग कर दे। अब मर्द के इस अख़्तियार को कम करने की एक सूरत तो ये है कि उसे भी तलाक़ का अख़्तियार न दिया जाता और वो भी औरत की तरह बेबस और मजबूर हो जाता। लेकिन ये चीज़ उसकी हाकिमाना शान के ख़िलाफ़ और दोनों के लिये परेशानी की वजह होती। इसलिये इसमें संतुलन पैदा करने के लिये मेहर को ज़रूरी किया गया कि जब शौहर तलाक़ देने का इरादा करे तो पैसों का नुक़सान उसकी निगाहों के सामने हो और बहुत ही मजबूरी में ये क़दम उठाये।

दूसरी मसलहत ये कि इससे निकाह की अज़मत और फ़ज़ीलत ज़ाहिर होती है। बग़ैर माल ख़र्च किये निकाह की कोई अज़मत व हैसियत ही न होती क्योंकि इन्सान दुनिया में जितना लालची माल का है उतना किसी और चीज़ का नहीं है। माल ख़र्च करना इन्सान के लिये बहुत ही कठिन होता है। ज़रूरी कामों में ही इन्सान पैसा ख़र्च करता है।

और मेहर औरत के परिवार वालों की दिली ख़ुशी की वजह बनता है क्योंकि उनकी लख़्ते जिगर और नूरे नज़र का अगर कोई मालिक बन रहा है, उससे जुड़ हो रहा है तो बिल्कुल मुफ़्त और मामूली चीज़ों की तरह नहीं बल्कि क़ीमती और मूल्यवान चीज़ों की तरह माल ख़र्च करके, इसमें उनकी आंख़ो को ठन्डक मिलती है।

इसी तरह मेहर के ज़रिये निकाह और ज़िना में फ़र्क़ किया जाता है। मेहर के ज़रिये लोगों को ये मालूम रहता है कि उनका मियां–बीवी का संबंध जायज़ और शरीअत के अनुसार है। पति–पत्नी भी सन्तुष्ट रहते हैं। इसके विपरीत बिना निकाह और मेहर के संबंध बनाने वाले भयभीत व रुस्वा रहते हैं। हर वक़्त चेहरे पर हवाइयां उड़ती हैं।

मेहर की मात्रा निश्चित न करने का कारण

जैसा कि हमने ऊपर लिखा है कि मेहर ज़रूरी तो है लेकिन शरीअत की तरफ़ से न्यूनतम् मात्रा तो निश्चित है लेकिन अधिकतम् मात्रा का कोई निश्चय नहीं है। इसका आधारभूत कारण तो ये है कि निकाह के लगाव के आधार से लोगों की आदत अलग–अलग होती है। किसी में लगाव ज़्यादा होता है, किसी में मध्य वर्ग की होता है किसी में बिल्कुल कम और किसी में बिल्कुल नहीं के बराबर।

दूसरे माली एतबार से लोगों की हालते अलग–अलग होती हैं। इसलिये अगर कोई मात्रा तय कर दी जाती है तो लोगों के लिये उस पर अमल करना बहुत मुश्किल हो

जाता है बल्कि कई बार नामुमकिन हो जाता है इसलिये कोई मात्रा निश्चित नहीं की ताकि लोग अपने हालात के एतबार से खुद ही इसको निश्चित कर लें।

कम से कम मेहर

कम से कम मेहर दस दिरहम यानि उससे कम मेहर नहीं हो सकती, ग्रामों के एतबार से उसका वज़न 30 ग्राम 618 मिली ग्राम चांदी है।

मेहर मिस्ल

किताबों में निकाह के बयान में मेहर मिस्ल का तज़किरा मिलता है। इसका मतलब ये है कि अगर किसी औरत का निकाह हुआ, और उसमें मेहर का तज़किरा ही नहीं आया, या तज़किरा तो आया लेकिन इस शर्त के साथ कि ये निकाह बग़ैर शर्त मेहर के होगा। तो उन दोनों सूरतों में फ़ुक़हा कहते हैं कि शौहर पर मेहर मिस्ल लाज़िम होगा।

मेहर मिस्ल क्या है?

इस औरत के ख़ानदान में हुस्न व जमाल और उम्र वग़ैरह के एतबार से जो औरतें इसकी बराबर की हो और जो मेहर उनका मुक़र्रर है वही उस औरत के लिये मेहर होगा, और ख़ानदान से मुराद उसकी बहनें, फूफिया, चचाज़ाद बहनें, फूफीज़ाद बहने हैं।

मेहर–ए–फ़ात्मी

जितनी औरतों की सरदार, हबीब–ए–किब्रिया सल्ल0 की लख़्त–ए–जिगर हज़रत फ़ातिमा रज़ि0 का जो मेहर तय हुआ था उसी को उर्फ़ व शरा में मेहर फ़ात्मी कहते हैं। इसकी मेक़दार पांच सौ दिरहम थी जिसका वज़न उलमा ने एक सौ इक्तीस तोला तीन माशा रखा है और अब ग्रामों के एतबार से डेढ़ किलो तीस ग्राम 960 मिलीग्राम चांदी बनती है।

एक ग़लतफ़हमी का इज़ाला (निवारण)

लोग निकाह के वक़्त मेहर फ़ात्मी की चांदी तो बंधवा लेते हैं और जब कभी उसकी अदायगी का ख़्याल आता है या किसी मजबूरी के तहत अदा करना पड़ता है तो उसकी क़ीमत लगाते हैं कि जिस वक़्त मेहर बंधा था उस वक़्त क़ीमत लगभग दस हज़ार थी और इस वक़्त क़ीमत लगभग पचास हज़ार रुप्ये है तो कौन सी क़ीमत देनी होगी। और जब उनसे मौजूदा क़ीमत अदा करने को कहा जाता है, तो माथे पर शिकन और ज़बान पर क्यों शब्द आताा है और यूं मानों ये तो इन्साफ़ के ख़िलाफ़ और ज़ुल्म है। तो साहब ये ज़ुल्म इसलिये नज़र आ रहा है कि हमने मेहर की शरई हैसियत को नहीं समझा। मेहर दरअस्ल औरत का मर्द के ऊपर क़र्ज़ है और क़र्ज़ में उसी चीज़ का लौटाना वाजिब होता है, जो चीज़ ली जाये, इसीलिये शरीअत का क़ानून भी यही कहता है और दुनिया का क़ानून भी यही कहता है। जैसे दस साल पहले आपने किसी को एक तोला सोना क़र्ज़ दिया उस वक़्त सोना पांच हज़ार रुप्ये में था और आज उसने आपको सोने के बदले में पांच हज़ार रूपये दिये तो क्या आप उसे लेंगे, बिल्कुल नहीं बल्कि आप एक तोले सोने की मांग करेंगे या आज की क़ीमत का। तो इसी तरह ये क़ानून मेहर में भी चलेगा।

मेहर शरअ मुहम्मदी

मेहर शरअ मुहम्मदी शरीअत की कोई इस्तलाह नहीं जो मेहर तय हो जायेगी वो शरअ मुहम्मदी कहलायेगी क्योंकि मेहर की कोई मात्रा शरीअत ने तय नहीं की है। ये लोगों में एक चलन बन गया है। इलाक़े के एतबार से भी इस उर्फ़ में फ़र्क़ है। कई इलाक़ो में इससे मुराद अक़ल मेहर होता है यानि मेहर की जो कम से कम मात्रा है। (3 तोला 618 मिलीग्राम चांदी) और अक्सर इलाक़ो में इससे मुराद मेहर फ़ात्मी होता है। तो अगर किसी निकाह में बतौर मेहर सिर्फ़ "मेहर शरअ मुहम्मदी" का तज़किरा हो तो इस इलाक़े में उर्फ़ के एतबार से अक़ल मेहर या मेहर फ़ात्मी अदा करना लाज़िम होगा।

मेहर मुअज्जल या मोजल

मुअज्जल उस मेहर को कहते हैं जिसकी अदायगी निकाह होते ही शौहर पर लाज़िम हो जाती है। औरत जब चाहे उसका मुतालबा कर सकती है, शौहर का फ़र्ज़ है कि बग़ैर मांगे जितनी जल्दी हो उसको अदा कर दे और मेहर मोजल उसको कहते हैं की अदा करने की तारीख़ तय कर ली जाये। इस तय तारीख़ से पहले न शौहर पर उसकी अदायगी लाज़िम और न औरत मांग सकती है। ज़्यादातर हमारे यहां कोई तारीख़ तय नहीं की जाती और मोजल का मतलब ये समझा जाता है कि जब कभी निकाह (तलाक़ या मौत की वजह से) ख़त्म हो जाये उस वक़्त अदायगी ज़रूरी है, उससे पहले नहीं, लेकिन ये ख़्याल ग़लत है .....

(शेष पेज 13 पर)

मेरे लिये
मेरा अल्लाह काफ़ी है

मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी

वर्तमान समय की सारी ताक़तें हर तरह से और पूरे वजूद के साथ मुसलमानों को मिटाने पर तुली हुई हैं और मुसलमानों की ताक़त को तोड़ने, उनकी योग्यताओं को समाप्त करने, उनकी एकता को छिन्न–भिन्न करने की राह में एड़ी–चोटी का ज़ोर लगा रही हैं कि मुसलमानों की हवा उखड़ जाये। उनकी भौतिक व आत्मिक दोनों पूंजी समाप्त हो जाये। उनके शासन का ख़ात्मा हो जाये। इस सबका उद्देश्य केवल ये है कि दीन इस्लाम का नाम लेने वालों की हालत ऐसी ख़राब हो जाये कि फिर वो दुनिया के नक़्शे में उभर न सकें और न इज़्ज़त व बुलन्दी पाना उनके लिये संभव हो।

अपने इन नापाक इरादों को पूरा करने के लिये वो मुसलमानों के दिल में ह्रास व भय, बेचैनी व निराशा के बीज बोते हैं और उन्हें तबाह व बर्बाद कर देने की योजना बनाते हैं। इसीलिये खुद ही उन पर जंगे डालते हैं। उनके क्षेत्रों पर हमला करते हैं। उनके माल व दौलत व पूंजी पर अपना हक़ समझते हैं। उनकी ताक़त को बर्बाद करते और उन्हें अन्धकारमय और भयानक भविष्य की राह दिखाते हैं। उन्होंने अन्दाज़ा लगाया है कि मुसलमानों और इस्लामी दुनिया के सिलसिले में उनका ख़्वाब जल्द ही पूरा होने वाला है। उनके इस ख़्याल को और ताक़त इस बात से मिल रही है कि मुसलमानों में से कुछ क़ौम व मिल्लत के ग़द्दारों ने चन्द टुकड़ों और झूठे वादों पर उनके हाथों अपने ज़मीर सौदा कर लिया। ये ज़मीर बेचने वाले ग़द्दार सोच से अधिक अपने आक़ाओं के वफ़ादार साबित हुए। उन्होंने उनके प्रोग्रामों को सफल बनाने और योजनाओं को पूरा करने में हलाकत व बर्बादी और नुक़सान व तबाहकारी के ज़रिये पूरी सरगर्मी दिखाई। आज जो हमें सख़्त आज़माइश नज़र आती हैं और तबाही के वाक़्ये सुनने में आते हैं और ख़ौफ़ व दहशत, जान व माल और जायदाद का ख़तरा सामने है और मुसलमानों के फ़ायदे से लापरवाही और उनकी ताक़तों को ख़राब करने की कोशिश जारी है। इसका निशाना हर वो शख़्स है जो इस्लाम का कलिमा पढ़ता हो और इस्लाम धर्म उसका इतिहास, उसके व्यवहार व शरीअत की ओर अपना इन्तशाब करता हूं।

सारी भौतिक ताक़ते एवं दृष्टिकोण इस उद्देश्य की पूर्ति पर एक हो गयी हैं। इससे अहम और ध्यान देने योग्य उद्देश्य उसके पास और कोई नहीं। पूरब व पश्चिम व उत्तर व दक्षिण सबकी निगाहें इधर उठी हुई हैं और पूरी दुनिया एक होकर मुसलमानों के ख़िलाफ़ उठ खड़ी हुई है। हर जगह मुसलमानों के इलाक़ों और उन्ही के समाज का निशाना बनाया जा रहा है ताकि मुसलमानों का क़िस्सा ही हमेशा के लिये ख़त्म कर दें।

अगर आज हम अपने देश और समाज के अन्दर ख़ौफ़ व दहशत और सख़्ती के परेशानी भरे हालात का सामना कर रहे हैं तो अस्ल मे ये उन्हीं दुश्मन की कार्यवाहियों के परिणाम हैं जो धीरे–धीरे बढ़ रहे हैं ताकि उन सभी इलाक़ों बल्कि उन जगहों पर भी नागवार हालात पैदा कर दिये जाने का रास्ता आसान हो जाये। जहां मुसलमान क़ौम आबाद और अपनी सरगर्मियों को अन्जाम देती हों, अगर हम उन ख़तरनाक साज़िशों से ग़ाफ़िल ही रहे और उनके मुक़ाबले की तैयारी न की तो वो दिन दूर नहीं ये पूरी उम्मत को अपनी लपेट में ले ले और ज्वालामुखी बनकर हम पर इस तरह फट पड़े कि निकलने का रास्ता भी न मिले और कहीं पनाह लेना भी मुश्किल हो जाये।

इससे पहले की पानी सर से ऊंचा हो जाये, हमारे लिये उन बलाओं से छुटकारा हासिल कर लेना संभव है और वो इस तरह कि अपने ईमान व अक़ीदे को मज़बूत करें। अल्लाह तआला की तरफ़ आकर्षित हों। नेक आमाल की पनाह लें और नेकी व फ़रमाबरदारी की तरफ़ तेज़ी से बढ़ें। आप स०अ० का इरशाद है: "नेक कामों की तरफ़ जल्दी से बढ़ो, जल्द ही ऐसे फ़ित्ने वजूद में आयेंगे जो शबे दीजोर के टुकड़ों की तरह होंगे जो सुबह को मोमिन था और शाम तक इस दौलत से महरूम होगा और जो शाम को ईमान वाला था वो सुबह को कुफ़्र के दायरे में आ चुका होगा। और दुनिया की बहुत मामूली कीमत पर अपने दीन का सौदा कर लेगा।"

अतः इस बात पर पुख़्ता यक़ीन की ज़रूरत है कि यही वो रास्ता है जिस पर चलकर हम हर तरह की साज़िशों और मुसीबतों और हर मन्सूबे से छुटकारा हासिल कर सकते हैं। क्योंकि अगर हमने सच में अल्लाह तआला की पनाह ली और उसी से मदद व नुसरत की दुआ की तो वो हमारे लिये सारे हालात को बेहतर बना देगा। हमारे लिये सारे असबाब जमा कर देगा। दुश्मनों के साथ हर मुक़ाबले में हमें कामयाब करेगा।

जनाब अबू हाजिर

आलोचना

जब सीमा पार कर जाये

इस युग की एक विशेषता ये है कि इसमें हर व्यक्ति अनिश्चितता और शक में पड़ा हुआ नज़र आता है। लेकिन अपनी परेशानियों और कठिनाइयों की ज़िम्मेदारी वो स्वयं क़ुबूल करने के लिये तैयार नहीं है। वो हर व्यक्ति और हर काम को आलोचनात्मक दृष्टि से देखता है और हर प्रशंसनीय कार्य को अपने से जोड़ने की कोशिश करता है और हर बुराई की ज़िम्मेदारी दूसरों पर डालता है। कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को किसी मसले में दिलचस्पी लेते हुए देखता है तो फ़ौरन बग़ैर खोज के उस पर इल्ज़ाम लगा देता है कि इसमें इसकी कोई ग़रज़ होगी। उसकी मेहनत को बहस की निगाह से देखेगा और कोई मसलहत या ग़रज़ उसमें तलाश करेगा फिर इस ख़्याली मसलहत को हक़ीक़त क़रार देगा और फिर इस पर यक़ीन करने की ज़िद करेगा।

हर व्यक्ति अपना स्तर और शौक़ रखता है लेकिन ज़रूरी नहीं कि ये ज़ौक़ हक़ीक़ी और स्तर स्वयं का बनाया हुआ हो। इसलिये ज़ौक़ और मेयार पसंदीदगी या नपसंदीदगी हालात व तालीम व तरबियत और घर के माहौल और ज़हन की हालत पर आधारित होता है। और वो सही और उसूली भी होता है और ग़लत भी लेकिन इसकी फ़िक्र किये बग़ैर कि अपनी ज़ौक़ व मेयार में कितनी सच्चाई और दुरूस्त रूझानात हैं। हर शख़्स अपने तसव्वुर को अस्ल मेयार समझकर दूसरो के लेख व भाषण और तरीक़े व सोच की बिना सोचे आलोचना कर बैठता है और इसके सामने दूसरों के ख़ास हालात और उसके तर्ज़ अमल के दायी और मजबूरियां कोई अहमियत नहीं रखतीं। वो इस सिलसिले में न ज़्यादा खोज करता है कि वजह पता करे और उसके बाद कोई राय दे और न राय देने में कोई एहतियात बरतता है और न आलोचना किये जाने वाले व्यक्तित्व की हैसियत और किरदार और सेवा का एतबार और एहतराम का ख़्याल रखता है।

इस ज़माने की कोई महफ़िल चाहे वो तफ़रीह की हो, या इल्मी, चाय के होटल की हो या काफ़ी हाउस की, बाज़ार की हो या घर का माहौल, ट्रेन का सफ़र हो या बस का, हर जगह और हर वक़्त एक प्रिय विषय किसी की आलोचना और हालात का शिकवा है। आलोचना का दायरा घटता और बढ़ता रहता है। अपनेआप को अलग करके हर व्यक्ति दोस्त या रिश्तेदार, दफ़्तर या इदारे के ज़िम्मेदार, शहर की व्यवस्था के ज़िम्मेदार और प्रशासन, रेल और बस की व्यवस्था के ज़िम्मेदार और जीवन के हर क्षेत्र से संबंध रखने वाले को अपनी आलोचना का शिकार बनाता है।

अख़बार पढ़ने वालों की आलोचना का दायरा पूरी दुनिया के शासकों और राजनेताओं और विचारको तक फैला होता है। खेल से दिलचस्पी रखने वाले उन बातों में कई–कई घन्टे गुज़ार सकते हैं। आलोचना करते समय ऐसा लगता है कि आलोचक इस मैदान में उनमें इस वर्ग से जुड़े लोगों से ज़्यादा समझ और अनुभव रखता है और इस मामले में उससे ज़्यादा फ़िक्र रखता है।

ओछी टिप्पणियां इस युग का चलन बन गयी हैं। कई बार कई–कई घन्टे मजलिस में ख़र्च करके दूसरों पर टिप्पणियां होती हैं। इस व्यवस्तता में अपनी ज़िम्मेदारियों से लापरवाही, या अपनी काम पर नज़र डालने का मौक़ा नहीं मिलता और दूसरों पर नज़र डालने की आदत बन जाती है। अपना निरीक्षण या अपने काम के सुधार की नौबत नहीं आती। ऐसा भी होता है कि एक मजलिस में किसी एक व्यक्ति की आलोचना हो रही हो कुछ देर के बाद कोई व्यक्ति उस मजलिस से उठकर जाता है तो फ़ौरन महफ़िल की आलोचना का रुख़ उसकी ओर हो जाता है। इसी प्रकार अगर कोई व्यक्ति अगर किसी विभाग का ज़िम्मेदार है तो वो अपने कार्यक्षेत्र को छोड़कर दूसरे सारे विभागों पर टिप्पणी करता है। कोताही और भ्रष्टाचार के आरोप लगाता है, दूसरी मजलिस में इसी के साथी उसी के कार्यक्षेत्र की आलोचना करते हैं। और उसी प्रकार के इल्ज़ाम लगाते हैं। जिस तरह के इल्ज़ाम वो दूसरों पर लगाता है।

ऐसी किसी महफ़िल में बैठने से ये असर पड़ता है कि दुनिया में हर जगह बुराई है और हर व्यक्ति कोताह है। इसका नतीजा ये निकलता है कि हर व्यक्ति ये कहता हुआ उठता है कि भाई क्या किया जाये। ये ज़माना अच्छाई का नहीं है तो अलग–थलग रहना होगा मानो वो ये इरादा करके उठता है कि बुराई ही एक राह है। दूसरी कोई राह नहीं और दुनिया बुराई ही की जगह है और कोई बड़े से बड़ा आदमी इससे बचा नही है। ये कितना ग़लत और नुक़सान देने वाला असर है।

राय देना अच्छी बात है लेकिन बुराई का चर्चा करना अच्छी बात नहीं है। आलोचना करते समय अगर ये सोचा जाये कि स्वयं अपने कार्यक्षेत्र में आलोचना करने वालों का क्या किरदार है और इसमें कितने नुक़सान हैं और वो अपने संकुचित स्तर पर क्या निर्माणी रोल अदा कर सकता है या कितनी बुराइयों को कम कर सकता है, तो बड़ी हद तक सुधार हो सकता है। जितना समय बातों में ख़र्च होता है उसका कुछ हिस्सा काम और फ़िक्र को दे दिया जाये तो बड़े सामाजिक बदलाव लाये जा सकते हैं। नज़र दूसरों से ज़्यादा अपने पर होनी चाहिये। दूसरों की कमज़ोरी बयान करने से हमारी ज़िन्दगी निर्माणी नहीं हो सकती।

निरीक्षण और आलोचना निर्माण के लिये किसी हद तक आवश्यक हैं लेकिन दूसरों के कामों व विचारों का निरीक्षण और उनकी आलोचना से बेहतर अपना निरीक्षण करें और स्वयं पर टिप्पणी है। इस्लाम में अपनी नफ़्स का जांच सुधार व उन्नति की पहली सीढ़ी है। लेकिन फ़िक्र व जायज़ा हमारे सामूहिक और व्यक्तिगत जीवन से समाप्त होता जा रहा है। इसी का परिणाम है कि संबंध और सामूहिक जीवन नफ़रत का शिकार हो रहा है और कार्यक्षमता कम हो रही है।

आलोचना और शिकवा के समय अगर ये सोच लिया जाये कि आलोचना करने वाला स्वयं इस जगह होता तो इसका क्या पक्ष होता तो आलोचना और शिकवा का क्षेत्र छोटा हो सकता है। कई बड़े आलोचकों को देखा गया है कि वो अपने संकुचित कार्यक्षेत्र में असफल होते हैं।

ये रुझान बेकारी से और अना से पैदा होता है। इसका शिकार व्यक्ति भी होते हैं और जमाअतें भी। कई लोगों का अहम काम ही दूसरो की कमियों को तलाश करना है। यदि उनके पास क़लम की ताक़त है तो अपनी शक्ति अनावश्यक ख़र्च करते हैं और चरित्र बिगाड़ने में ताक़त ख़र्च करते हैं। ये रवैया हक़ीक़त में इन्सानी योग्यता पर नश्तर चलाने के बराबर है। इस तरह के लोग काम करने वालों का दिल तोड़ते हैं और हिम्मत कम करते हैं जो बड़े क़ौमी नुक़सान का कारण बनता है। इससे अपना जो ज़ाती नुक़सान होता है वो ऐसा है जिसकी पूर्ति न की जा सके। काम न करना कोताही है लेकिन काम करने वालों के दिलों को ठेस पहुंचाना या काम से रोकना बहुत ही गंभीर क़ौमी व व्यवहारिक जुर्म है।

शेष : निकाह में मेहर की ज़रूरत.....

इसलिये कि मेहर एक क़र्ज़ है और कर्ज़ जितनी जल्दी अदा कर दिया जाये, बेहतर है, दूसरे का क़र्ज़दार रहना शरीअत को पसंद नहीं।

पसंदीदा मेहरः मेहर के बारे में पसंदीदा और मसनून ये है कि इतना कम न हो कि उसकी कोई क़ीमत ही न रहे और इतना ज़्यादा न रहे कि शौहर इसकी अदा करने में असमर्थ हो। आप स0अ0 के ज़माने में पांच सौ दिरहम (मेहर फ़ात्मी) एक मुनासिब और संतुलित मेहर थी, आज के इस दौर में भी मेहर फ़ात्मी बहुत मुनासिब मेक़दार है, न बहुत कम है और न बहुत ज़्यादा और ये सुन्नत की पैरवी है लिहाज़ा इसको अख़्तियार करना बेहतर है।

एक तम्बीहः मेहर न इतनी कम हो कि औरत की कोई हैसियत ही बाक़ी न रहे, और न इतना ज़्यादा हो कि शौहर उसकी अदायगी का ख़्याल भी दिल से निकाल दे और फिर अल्लाह के अज़ाब का शिकार हो जाये। क्योंकि एक हदीस पाक में हुज़ूर स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया है कि जिस शख़्स ने किसी औरत से निकाह किया और मेहर अदा करने का उसका इरादा नहीं है तो क़यामत के दिन अल्लाह के दरबार में ज़िनाकार की हैसियत ये पेश होगा।

मेहर की माफ़ीः मेहर ख़ालिस औरत का हक़ है और वो इसको पूरा भी माफ़ कर सकती है और उसकी तय रक़म में कमी भी कर सकती है यानि पूरी बाअख़्तियार है लेकिन माफ़ी के लिये रज़ामन्दी और खुशदिली शर्त है। ज़ोर–ज़बरदस्ती ये माफ़ कराने से माफ़ नहीं होगा। हदीस में है कि किसी का माल बग़ैर उसकी रज़ामन्दी व खुशदिली के हलाल व जायज़ नहीं है।

मुफ़्ती मो. अहमद अली

औरतों का लिबास कैसा हो?

शर्म व हया मानव प्रकृति की मांग है। ईमान वालों के लिये तो ये एक ऐसी ख़ूबी है कि इस्लाम में हया और ईमान को एक दूसरे का हिस्सा और बेहयाई व बेशर्मी को प्रकृति की मांगों और शराफ़त के नियमों के विरुद्ध घोषित कर दिया गया है। विशेषतयः जिस्म के विशेष अंगों को छिपाना सिर्फ़ इन्सानों की प्राकृतिक एवं ऐच्छिक आवश्यकता की मांग ही नहीं, बल्कि इस्लामी शरीअत की ताकीदी और आरम्भिक आदेश है। यही चीज़ शराफ़त और इन्सानियत की दलील और इज़्ज़त व अस्मत के बचाव का ज़रिया और व्यवहार व चरित्र की पराकाष्ठा है जिसकी पूर्ति शरई लिबास से होती है। इसलिये लिबास बनाने और उसके अपनाने में इस्लामी शरीअत के उसूलों और हुक्मों को ध्यान में रखना आवश्यक है। क्योंकि लिबास का ज़िन्दगी पर और अख़्लाक़ व किरदार पर बड़ा असर होता है। सामूहिक जीवन और सामाजिक व्यवस्था भी इसी लिबास के नेक व बुरे प्रभाव से प्रभावित होती है। इसीलिये कुरआन मजीद व हदीस–ए–पाक में भी इस विषय के अन्तर्गत बहुत ही संतुलित शिक्षा है। लिबास का आधारभूत उद्देश्य बताते हुए अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमायाः

"ऐ आदम की औलाद! हमारे ईनामों में से एक ईनाम ये भी है कि हमने तुम्हारे लिये लिबास पैदा किया जो तुम्हारे सतर यानि पर्दे वाले अंगों को भी छिपाता है और तुम्हारे बदन के लिये ज़ीनत भी होता है।" (अलआराफ़: 26)

"सौआत" जिस्म के उन हिस्सों को कहते हैं जिसके खोलने को इन्सानी फ़ितरत बुरा और शर्म के क़ाबिल समझती है। इसका बुनियादी मक़सद सतर छिपाना है और औरत का सारा जिस्म सिवाये चेहरे और हाथों के गट्टों तक सब का सब सतर है। जिसका छिपाना फ़र्ज़ और खोलना हराम है। जो इस मक़सद को पूरा करता है वही शरई लिबास है।

शरई लिबास की पूर्ति तीन शर्तों पर होती है। पहली शर्त ये है कि लिबास इतना लम्बा हो कि पूरे सतर को घेर ले। जिस्म का कोई हिस्सा भी खुला हुआ न हो। जाहिलियत के ज़माने में औरतों का नियम था कि दुपट्टा सर पर डाल कर उसके दोनों किनारों को पीठ पर छोड़ देती थीं। जिससे गिरेबान, गला, सीना और कान खुले रहते थे। ऐसी हालत में मुसलमान औरतों को कुरआन ने हुक्म दियाः

"और औरतें अपने दुपट्टे अपने सीने पर डाला करें।" (सूरह नूरः 31)

हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं कि अल्लाह तआला उन औरतों पर रहम फ़रमाये जिन्होंने शुरूआती दौर में हिजरत की, जब अल्लाह ने आयत नाज़िल करके औरतों को दुपट्टा से सर ढ़ांकने का हुक्म दिया तो उन्होंने अपनी मोटी चादर काटकर दो पट्टे बना लिये। (अबूदाऊदः 567/2)

आज बड़ी लापरवाही और ग़फ़लत से औरतें सर और बहुत सी औरतें सीना भी खोले रखती हैं। ये बेहयाई की बात है। शरई लिबास की पूर्ति उस समय होगी जबकि सर सीना और बाज़ू भी कपड़े से छिपे हुए हों।

दूसरी शर्त ये है कि लिबास इतना मोटा हो कि उसके अन्दर का बदन न झलकता हो। लिबास अगर इतना बड़ा हो कि सतर तो छिप जाये लेकिन इतना हल्का हो कि बदन झलकता हो तो लिबास शरई नहीं कहा जायेगा। हज़रत दहीया बिन ख़लीफ़ा रज़ि0 कहते हैं, "एक बार रसूलुल्लाह स0अ0 की ख़िदमत में मिस्र से कुछ क़िब्ती चादरें आयीं, तो आप स0अ0 ने उनमें से एक मुझको इनायत फ़रमायी और इरशाद फ़रमाया कि इसके दो टुकड़े कर लेना, इनमें से एक का कुर्ता बना लेना और दूसरा टुकड़ा अपनी बीवी को दे देना, वो इसका दुपट्टा बना लेगी। मैं उसको लेकर जब जाने लगा तो आप स0अ0 ने रोककर इरशाद फ़रमाया कि, अपनी बीवी से

कह देना कि इसके नीचे एक और कपड़ा लगा ले ताकि उसके बाल और जिस्म न नज़र आयें।" (अबूदाऊदः 567/2) इसी तरह एक बार हज़रत आयशा रज़ि0 की ख़िदमत में उनके भाई अब्दुर्रहमान बिन अबीबकर की बेटी हफ़्सा पहुंची। उन्होंने बारीक दुपट्टा ओढ़ रखा था। हज़रत आयशा रज़ि0 ने इसको अपने हाथों में लेकर फाड़ दिया और अपने पास से एक मोटा दुपट्टा ओढ़ा दिया। (मोता इमाम मालिकः 366) हज़रत आयशा रज़ि0 का लिबास के सिलसिले में ये नियम अस्ल में रसूलुल्लाह स0अ0 की तरबियत का नतीजा था कि उन्होंने बारीक कपड़ों को चाहे वो दुपट्टा ही क्यों न हो बिल्कुल पसंद नहीं फ़रमाया।

उप्रोक्त रिवायतों से पता चलता है कि बारीक कपड़े की ओढ़नी भी इस्तेमाल करने से मना किया गया है, तो दूसरे कपड़ों के बारे में कितनी एहतियात की गयी होगी। हमारे ज़माने में फ़ैशन की बीमारी और ग़लत चलन से बारीक से बारीक कपड़ा इस्तेमाल करने को इज़्ज़त व शराफ़त समझा जा रहा है, जो सरासर हया व शर्म के ख़िलाफ़ है। जो लिबास की सूरत में नंगापन और अश्लीलता है।

तीसरी शर्त ये है कि लिबास इतना ढ़ीला हो कि शरीर के अंग नुमायां न हों। ज़ाहिर सी बात है कि लिबास इस क़दर चुस्त और टाइट हो कि अंगो की बनावट साफ़ तौर पर ज़ाहिर होने लगे तो उस लिबास से फ़ायदा ही क्या है? बहरहाल लिबास इतना बड़ा हो कि सतर छिप जाये और इतना मोटा हो कि जिस्म के हिस्से न झलकते हों और इतना ढीला हो कि बदन की बनावट न नुमायां हो। यही शरई लिबास है और अगर लिबास छोटा या बहुत ही बारीक हो, या फिर टाइट और चुस्त हो तो ये बेलिबासी और नंगापन है यानि इसका पहनना और न पहनना बराबर है। ऐसे लिबास का इस्लाम से कोई संबंध नहीं है। ऐसे लिबास पहनने वाली औरतों के बारे में सख़्त वईद बयान की गयी है। हज़रत अबूहरैरा रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया कि दोज़ख़ियों की दो जमाअतें मैंने नहीं देखीं (कि एक अभी वो मौजूद नहीं हुई बाद में उनका वजूद होगा) एक वो जमाअत होगी जिनके पास बैल की दुमों की तरह कोड़ा होगा और वो उससे लोगों को मारेंगे, दूसरी जमाअत उन औरतों की होगी जो कपड़े पहने हुए होंगी मगर उसके बावजूद नंगी होंगी, मर्दों को आकर्षित करने वाली और खुद उनकी ओर आकर्षित होने वाली होंगी। उनके सर ख़ूब बड़े–बड़े ऊंट के कूबड़ की तरह होंगे ये झुके हुए होंगे। ये औरतें न जन्नत में दाख़िल होंगी और न उसकी खुशबू सूंघेगी। (मुस्लिमः 205/5)

ये लिबास के बारे में इस्लाम की मुबारक तालीम है। जो हर औरत के लिये शराफ़त का सरमाया और इज़्ज़त के बचाव का ज़रिया है। इसको छोड़कर फ़ैशन की पैरवी करना और पश्चिमी सभ्यता को अपनाना बड़ी नाक़द्री की बात है। आज लिबास के सिलसिले में इस्लाम की इन तालीमों को नज़रअन्दाज़ करने के नतीजे में समाज बड़ी तेज़ी के साथ अश्लीलता के बहाव में बहा जा रहा है। चरित्र का नामोनिशान मिटता जा रहा है। इसलिये आज ज़रूरत है कि औरतें अपने लिबास शरीअत की रोशनी में बनायें, ये चीज़ें उनके लिये भी ख़ैर का ज़रिया होगी और समाज की पवित्रता का भी ज़रिया होगी।

शेषः ब्याज का लेन–देन .....

न दुनिया में सुख, चैन व आफ़ियत नसीब हो सकेगी और न आख़िरत में दोज़ख़ के अज़ाब से निजात मिलेगी। कुछ दिन की ज़िन्दगी में थोड़ा सा माल पाने और उस माल के ज़रिये ऐश व आराम व राहत के साधन एकत्र करने का इतना बड़ा ख़ामियाज़ा भुगतना पड़ेगा जिस का विचार ही दिल दहला देने के लिये काफ़ी है। कितनी बड़ी नादानी में हैं वो लोग जो थोड़े से पैसों के लिये दोनों जहानों का ख़सारा ले रहे हैं और अल्लाह तआला के सख़्त अज़ाब को दावत दे रहे हैं। सभी ईमान वालों को अल्लाह तआला की इस नसीहत पर अमल करना चाहिये जो सूरह आले इमरान में दी गयी हैः

"ऐ ईमान वालों! ब्याज को बढ़ा–चढ़ा कर न खाओ और अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम कामयाब हो जाओ और डरो उस दोज़ख़ की आग से जो नाशुक्रे इन्सानों के लिये तैयार की गयी है। और (ब्याज के लेन–देन के सिलसिले) अल्लाह और उसके पाक रसूल स0अ0 का हुक्म मानों ताकि तुम पर रहम किया जाये।" (आले इमरानः 130–132)

एक सफ़र ऐसा भी

मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़

मौलाना जाफ़र थानेसरी रह0 अपनी किताब "तारीख़ काला पानी" में लिखते हैं कि हमारे उलमा का एक क़ाफ़िला था। अंग्रेज़ों ने उस क़ाफ़िले को दिल्ली से लाहौर भेजा मगर जिस अंग्रेज़ ने दिल्ली से लाहौर भेजा उसने हमें केवल हथकड़िां लगायीं अतः हम बड़े इत्मिनान से अल्लाह–अल्लाह करते हुए दिल्ली से लाहौर पहुंच गये। लेकिन लाहौर जेल का इंचार्ज बहुत ही सख़्त और हिंसक प्रवृति का आदमी था। उसने कहा ये मौलवी आराम के साथ सफ़र करके यहां आ गये!!! अब मैं इनको सबक़ सिखाउगां कि ये हमारे साथ कैसे ग़द्दारी करते हैं और हमारे नमक हराम बनते हैं। इसीलिये उसने रेलगाड़ी के अन्दर छोटे–छोटे केबिन बनवाये और हर केबिन के चारों तरफ़ कील लगवाये। वो फ़रमाते हैं कि हमारे बैठने की जगह पर चारों तरफ़ एक–एक दो–दो इंच की दूरी पर कील लगे हुए थे। उन केबिनों में हमें बिठाया गया। जब रेलगाड़ी चलती और पीछे से झटका लगता तो हमारे जिस्म पर पीछे कील चुभ जाते और जब दायें तरफ़ झटका लगता तो दायें तरफ़ कील चुभ जाते, जब बायें तरफ़ झटका लगता तो बायें तरफ़ कील चुभ जाते। चलती हुई गाड़ी पर हमें पता नहीं चलता था कि ब्रेक लगनी है या नहीं। जब ब्रेक एकदम से लगती तो हमारे ज़ख़्मों पर फिर कील चुभते। फ़रमाते हैं कि वहीं पसीना भी निकलता और ख़ून भी बहता। सो भी नहीं सकते थे और उन्होंने हमें लाहौर से मुल्तान भेजा था। ये तकलीफ़ देने वाला सफ़र एक महीने में तय हुआ और हम पूरा महीना दिन को भी बैठे रहते और रात को भी बैठे रहते। उसी जगह पर हमारा पेशाब–पाख़ाना भी निकल जाता था। हमारे लिये पानी वग़ैरह कुछ भी नहीं होता था जिसकी वजह से बदबू भी बहुत ज़्यादा थी। इतनी सख़्त सज़ाएं इसलिये दीं कि हम तंग आकर कह दें कि जी आप जो कुछ कहते हैं हम वो मान लेते हैं।(मगर क़ुर्बान जायें उनकी अज़मतों पर कि उन्होंने ये तकलीफ़ तो बर्दाश्त कर ली मगर अंग्रेज़ों की बात को मानना पसंद न किया)

फ़रमाते हैं कि एक महीने के इतने कठिन सफ़र के बाद हम जब मुल्तान पहुंचे तो वहां पर तो वहां पर मौजूद हाकिम ने कहा कि इन लोगों को कल हम फांसी के फन्दे पर लटका देंगे, जब हमने फांसी की ख़बर सुनी तो हमारे दिल खुश हुए कि अब हमें अपना मक़सद नसीब हो जायेगा।

अगले दिन वो जब हमें फांसी देने के लिये आया तो उसने देखा कि हमारे चेहरों पर रौनक़ थी, क्योंकि थकावट ख़त्म हो चुकी थी। हमारे तरोताज़ा चेहरों का तेज देखकर वो कहने लगाः

ऐ मुल्लों! तुम्हारे चेहरे पर मुझे ताज़गी क्यों नज़र आ रही है? हममें से एक ने जवाब दिया कि हमारे चेहरे इसलिये तरोताज़ा हैं कि आप हमें फांसी देंगे तो हमें शहादत नसीब हो जायेगी। जब उसने ये बात सुनी तो वो वहीं से वापिस अपने दफ़्तर चला गया और उसने अपनी बड़ी अथारिटी से संपर्क किया और बताया कि ये तो खुश हैं कि इनको फांसी दे दी जाये। इसीलिये उसने वापिस आकर ऐलान किया किः

ऐ मुल्लाओं! तुम खुश होकर मौत मांगते हो लेकिन हम तुम्हें मौत भी नहीं देना चाहते। हमने ये फ़ैसला किया कि तुम्हें काला पानी भेज दिया जाये। इस जगह पर पहुंचकर मौलाना जाफ़र थानेसरी रह0 ने एक शेर कहाः

मुस्तहिक़ दार को हुक्म नज़र बन्दी मिला
क्या कहूं कैसे रिहाई होते–होते रह गयी

आगे फ़रमाते हैं कि इससे भी बड़ी क़ुर्बानी का वक़्त वो आया जब हमें काला पानी भेज रहे थे। उस वक़्त उन्होंने मन्सूबों के तहत हमारे बेटों–बेटियों, बीवियों और बाक़ी छोटे बड़ों को बुलवाया और हमें ज़ंजीरों में बांधकर बेड़िया पहनाकर उनके सामने पेश किया और उनसे कहा कि तुम उन्हें मना ला, अगर ये कह दें कि हम फ़िरंगी के ग़द्दार नहीं हैं तो हम उन्हें भी तुम्हारे साथ घर भेज देते हैं। कहते हैं कि अब बीवी भी रो रही थी, बेटी भी रो रही थी, मेरा एक छोटा बेटा भी रो रहा था और मेरे साथ लेट कर कह रहा था कि अब्बू! आप ये कह क्यों नहीं देते, बस आप कह कर हमारे साथ घर चलें। फ़रमाते हैं कि मेरे लिये उससे सब्र वाला लम्हा कोई नहीं था, जब मेरा बेटा बहुत ज़्यादा रोया तो मैंने अपनी बीवी से इशारा किया कि बच्चे को सीने से लगाओ और उस बच्चे से कहा कि बेटा! अगर ज़िन्दगी रही तो तुम्हारा बाप तुम्हें दुनिया में आकर मिलेगा और अगर न रही तो फिर क़यामत के दिन क़ौसर के हौज़ पर हमारी मुलाक़ात होगी।

मैं सलाम करता हूं उन उलमा की अज़मत को, मैं सलाम करता हूं उनके सब्र का जिन्होंने इस क़द्र क़ुर्बानियां देकर दीन की कश्ती को बहरे ज़ुल्मात के भंवर से बचाये रखा और अल्हम्दुलिलाह हमारे पास आज ये दीन महफ़ूज़ हालत में मौजूद है।

हिंसा और अश्लीलता पर आधारित प्रोग्राम से मासूमों के दिमाग़ आरम्भ से ही प्रभावित

कार्टून चैनल

बच्चों के लिये अत्यधिक हानिकारक

मुहम्मद जसीमुद्दीन निज़ामी

बच्चे किसी भी क़ौम व देश की पूंजी व भविष्य होते हैं किन्तु पीड़ा ये है कि क़ौम के इस भविष्य के "वर्तमान" का क़ीमती हिस्सा कार्टून चैनल देखते हुए ही गुज़र जाता है, जिसका परिणाम ये होता है कि समय आने पर उनमें से अधिकतर क़ौम या देश का भविष्य तो दूर स्वयं अपने भविष्य की तलाश में अतीत का हिस्सा बन जाते हैं। अलबत्ता कार्टून चैनल देखने में बिल्कुल तफ़रीह लगती है लेकिन उन पर पेश किये जाने वाले प्रोग्रामो में बच्चों का लगाव और हद से ज़्यादा दिलचस्पी न केवल उनकी शिक्षा बल्कि उनकी सेहत पर भी बहुत ही नकारात्मक प्रभाव छोड़ रहा है। आज के दौर में लगभग हर घर में टीवी मौजूद है जहां बच्चे घन्टों टीवी के सामने वक़्त गुज़ार देते हैं और मां–बाप इस ओर कोई ध्यान नहीं देते हैं। वो ये सोच कर संतुष्ट हो जाते हैं कि बच्चा एक जगह पर बैठा हुआ है लेकिन विशेषज्ञ इस बाप पर सहमत हैं कि लगातार टीवी या वीडियो गेम्स देखने से बच्चों की सेहत के साथ–साथ उनका दिमाग़ भी बुरी तरह प्रभावित होता है। स्कूल और ट्यूशन से आने के बाद अगर आपका बच्चा सारा वक़्त घर में टीवी देखकर गुज़ारता है तो ये आपके लिये चिन्ता का विषय है। आपके बच्चे का दूसरे बच्चों के साथ घुलमिल कर खेलना बहुत ज़रूरी है। अक्सर देखा गया है कि बच्चों के अन्दर कार्टून चैनल्स देखने की इस क़द्र दीवानगी छायी हुई होती है कि स्कूल से आते ही बस्ता एक तरफ़ रखकर जल्दी से रिमोट हाथ में लिया और कार्टून चैनल आन, हालत ये कि वो हर काम टीवी के सामने ही करते हैं। खाना वहीं खायेंगे, होमवर्क वहीं करेंगे, कपड़े वहीं बदलेंगे। विशेषज्ञों का मानना है कि इस शौक़ के नतीजे में शिक्षा के स्तर में भी गिरावट आती है और सेहत और तन्दरुस्ती पर भी बुरा असर पड़ता है। ये सब जानते हैं कि शिक्षा पूरा ध्यान चाहती है, मगर हाल ये है कि दिल कार्टून नेटवर्क में है और हाथ होमवर्क कर रहे होते हैं। ऐसे में होमवर्क पूरा हो जाता है मगर होमवर्क के ज़रिये जिस बात को दिल व दिमाग़ में बिठाने की ज़रूरत थी वो पूरी नहीं हो पाती। शारीरिक वृद्धि के लिये कसरत आवश्यक है और बच्चों की भाग–दौड़, इधर–उधर जाना, गलियों में खेलन–कूदना ही उनकी कसरत है। मगर ये सब करने के बजाय वो कार्टून देखने के लिये घर में ही बैठे रहेंगे तो उनकी सेहत ख़राब तो होगी ही। आज के दौर में बच्चों में ज़्यादा बीमारियां बढ़ रहीं हैं, मोटापा बढ़ रहा है, इसका एक कारण खेल–कूद व भाग–दौड़ के बजाय घर में ही दिन–रात टीवी पर समय बिताना भी है। बच्चों की इस आदत से केवल उनकी शिक्षा व सेहत पर ही नकारात्मक प्रभाव नहीं होता बल्कि कार्टून चैनलों में जिस प्रकार की मार–धाड़ और हिंसा पर आधारित प्रोग्राम दिखाये जाते हैं, उससे भी मासूम ज़हनों में ग़लत असर होता है। इसके अलावा उन प्रोग्रामों के किरदारों में लड़कियों को जिस तरह के कपड़े पहनाये जाते हैं उसे देखकर बचपन ही से उनके ज़हन व फ़िक्र से शर्म व हया और इस्लामी सभ्यता व संस्कृति की छाप मिटने लगती है। ये ऐसी हक़ीक़त है जिसके लिये किसी सबूत की ज़रूरत नहीं। ध्यान रहे कि साइंस के एतबार से भी ज़्यादा देर तक टीवी देखना नुक़सान देह है और ख़ासकर बच्चों के लिये। इस हवाले से छपने वाली एक खोज के अनुसार ज़्यादा देर तक टीवी देखना या वीडियो गेम खेलना बच्चों की ज़हनी सेहत के लिये अच्छा नहीं। इस हवाले से हाई और प्राइमरी स्कूलों के लगभग तीन हज़ार बच्चों पर दो साल तक शोध किया गया। शोध में अन्तर्राष्ट्रीय विशेषज्ञों के एक ग्रुप ने ये परिणाम निकाला कि जो बच्चे टेलीविज़न देखने या वीडियोगेम्स खेलने में ज़्यादा वक़्त गुज़ारते हैं उनमें डिप्रेशन और परेशानी के आसार बढ़ जाते हैं और वो दूसरों से मिलने–जुलने से घबराते हैं। अतः इस ओर ध्यान देने और बच्चों के टीवी देखने की आदत पर पाबन्दी लगाने की आवश्यकता है। किन्तु ये उसी समय सम्भव है माता–पिता और घर के दूसरे लोग हद से ज़्यादा टेलीविज़न देखने की अपनी आदत पर कन्ट्रोल करने की कोशिश करें, ताकि ये बच्चे सही अर्थ में क़ौम व देश की पूंजी और भविष्य बन सकें।

फ़य्याज़ी और सख़ावत के नमूने

प्रोफ़ेसर सैय्यद मुहम्मद इज्तिबा नदवी

इस्लामी इतिहास सख़ावत के नमूनों से भरा हुआ है। इस्लाम का श्रेष्ठ गुण ये भी है कि वो दूसरों पर ख़र्च करने, ग़रीबों और बेसहारा लोगों की मदद करने, पड़ोसियों और रिश्तेदारों का सहयोग करने का हुक्म देता है। मुसलमानों ने इन अधिकारों को अदा करने के सिलसिले में ऐसी मिसालें पेश कीं कि जिसका उदाहरण किसी और क़ौम में मिलना मुश्किल है। उन्होने कई बार अपने भाइयों और ज़रूरतमन्द लोगों की ज़रूरतों को पूरा किया है और खुद सब्र किया परेशानी उठाई और तकलीफ़ बर्दाश्त की है जिसकी तरफ़ कुरआन ने इशारा किया:

(अनुवाद: और उन लोगों का यही हक़ है जो राजधानी यानि मदीना में उन मुहाजिरीन के आने के पहले से क़रार पकड़े हुए हैं जो उनके पास हिजरत करके आता है। उससे ये लोग मुहब्बत करते हैं और मुहाजिरीन को जो कुछ मिलता है उससे ये अन्सार अपने दिलों में रश्क नहीं करते और अपने से मुकद्दम रखते हैं जबकि उन पर फ़ाक़ा ही हो, और वाक़ई जो व्यक्ति अपने को कन्जूसी से बजाए रखेगा ऐसे ही लोग फ़लाह पाने वाले हैं)

दीन की इन सारी विशेषताओं में नबी अकरम स0अ0 सबसे श्रेष्ठ थे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि0 फ़रमाते हैं कि हुजूर स0अ0 सबसे ज़्यादा सख़ी थे। मगर जो फ़क़ीराना ज़िन्दगी बसर करते थे दादो दहिश में बादशाहों को शर्मिन्दा करते थे। एक बार इन्तहाई ज़रूरत के वक़्त एक ख़ातून ने चादर पेश की और आप स0अ0 ने उसे ओढ़ लिया। उसी समय एक व्यक्ति आया और उसने आप स0अ0 से कुछ ओढ़ने के लिये मांगा, आप स0अ0 ने चादर उतार कर उसको दे दी। क़र्ज़ लेकर ज़रूरत मन्दों की ज़रूरत पूरी करते ख़ास तौर से रमज़ानुल मुबारक के आख़िरी दिनों में बहुत ही फ़य्याज़ी फ़रमाते और इस महीने में जब हज़रत जिबराईल अलै0 तश्रीफ़ लाते और आप से कलाम-ए-मजीद का दौर करते तो उस समय आप स0अ0 भलाई और लाभ पहुंचाने वाली बारिश और तेज़ हवा से भी ज़्यादा सख़ावत फ़रमाते। तिरमिज़ी की रिवायत है कि एक बार हुजूर अकरम स0अ0 की ख़िदमत में किसी ने नब्बे हज़ार दिरहम पेश किये। आप स0अ0 ने उसी समय सब बंटवा दिये। दिरहम बंट जाने के बाद एक भिखारी आया हुजूर स0अ0 ने फ़रमाया अब तो मेरे पास कुछ रहा नही, तुम मेरे नाम से कर्ज़ ले लो जब मेरे पास होगा मैं अदा कर दूंगा। हज़रत जाबिर रज़ि0 ने बयान किया कि ऐसा कभी न हुआ हुजूर स0अ0 से कुछ मांगा गया हो और आपने मना फ़रमा दिया हो। हज़रत अनस रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने हज़रत अबूज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ि0 से फ़रमाया कि: ऐ अबूज़र! मुझे ये बात पसन्द नहीं कि मेरे पास ओहद पहाड़ के बराबर सोना हो, और तीसरे दिन तक उसमें से मेरे पास एक अशर्फ़ी भी बच जाए, केवल कर्ज़ की अदाएगी के लिये रह सकती है। तो ऐ अबूज़र! मैं इस माल को दोनों हाथों से खुदा की मख़लूक़ में बांट के उठूंगा। एक रोज़ रसूलुल्लाह स0अ0 को छः अशर्फ़ियां मिलीं। आपने चार ख़र्च कर दीं और दो बच गयीं उनकी वजह से आपको पूरी रात नींद न आयी। उम्मुल मोमीनीन हज़रत आयशा रज़ि0 ने अर्ज़ किया ये तो मामूली सी बात है, सुबह ख़ैरात कर दीजिएगा, आपने फ़रमाया: ऐ हमीरा (ये हज़रत आयशा का लक़ब था) क्या पता मैं सुबह तक ज़िन्दा रहूं या नहीं?

एक वाक़्या अमीरुल मोमीनीन हज़रत उमर रज़ि0 के शब्दों में सुनिये फ़रमाते हैं कि तबूक की जंग के लिये लश्कर की तैयारी हुई तो मुसलमान बहुत तंगी मे थे मगर लोगों ने बड़ी फ़य्याज़ी से माल जमा किया। औरतों ने अपने ज़ेवर तक हुजूर अकरम स0अ0 की ख़िदमत में पेश कर दिये। फ़रमाते हैं कि उस समय मैं कुछ ख़ुशहाल था ख़्याल आया कि इस बार हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि0 से बाज़ी मार ले जाउंगा इसलिये मैंने अपना आधा माल लिया और ख़ुशी-ख़ुशी आप स0अ0 की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। इतने में हज़रत अबूबक्र भी सामान लिये हुए मस्जिद-ए-नबवी में आये। आंहज़रत स0अ0 ने मुझसे पूछा: उमर! क्या लाये, मैंने कहा कि: अपने पूरे माल का आधा ले आया हूं और आधा घर वालों के लिये छोड़ आया हूं। हुजूर स0अ0 ने ख़ुश होकर बरकत की दुआ दी। फिर हज़रत अबूबक्र से पूछा, अबूबक्र तुम क्या लाये, उन्होने कहा मेरे पास जो कुछ था सब ले आया हूं। फ़रमाया और घरवालों के लिये क्या छोड़ा है हज़रत अबूबक्र रज़ि0 ने जवाब दिया, अल्लाह और अल्लाह के रसूल काफ़ी हैं। हज़रत उमर रज़ि0 कहते हैं कि इसके बाद मैंने यक़ीन कर लिया कि अबूबक्र रज़ि0 का मुक़ाबला नामुमकिन है।

इस्लाम और पश्चिम की कशमकश

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

"आने वाले सौ सालों में ब्रिटेन बल्कि पूरे यूरोप पर अगर किसी के शासन की संभावना पैदा हो सकती है तो वो केवल इस्लाम है।" (जार्ज बर्नाडशॉ– द जिनविन, 1936)

ये थी पश्चिमी चिन्तक की वो दूरदृष्टि या इस्लामी अधिपत्य का वो भय जिसका एहसास उनको इस समय हो चुका था जब तरोताज़ा पश्चिम के सामने पूरब की सांसे टूट रही थीं और इस्लामी हुकूमत का शीराज़ा बिखर चुका था। ये वही ज़माना है जब अल्लामा इक़बाल रह0 पूरब को पश्चिम की सभ्यता के अस्थायित्व से आगाह कर रहे थे, और मिस्र में हसनुल बन्ना रह0 मुसलमानों के इस्लामी संस्कृति के उत्थान व पतन की वास्तविकता बता रहे थे। दूसरी ओर सहयूनी आक़ा दोहरी पॉलिसी में व्यस्त थे। एक पॉलिसी दुनिया को पूंजीवाद के साथ विभिन्न गुमराह करने वाले फलसफ़ों में उलझाना था और दूसरी पॉलिसी सांस्कृतिक बिखराव की ओर क़दम बढ़ाना था। यानि पश्चिमी सभ्यता को इस्लामी सभ्यता के मुक़ाबले के लायक़ बनाना और स्वयं इस्लामी सभ्यता में शक व शुब्हे पैदा करके उसे खोखला बनाने की कोशिश करना ताकि इन्सानी दुनिया पर यहूदियत की पकड़ मज़बूत और स्थायी हो सके।

इस्लामी सभ्यता के विरूद्ध प्रापगन्डो का आरम्भ सलीबी जंगों में यूरोप की पराजय के बाद से हो चुका था लेकिन इस्लाम विरोधी इस मुहिम में जान डालने और इसे ताज़ा करने का काम सहयूनी लेखक बर्नाड लुइस ने अहम रोल अदा किया। इस्लामी और पश्चिमी सभ्यता के विरोध की राह आसान करने की भरपूर कोशिश की, और इस्लाम का ऐसा "हव्वा" (Hype) खड़ा किया जिसके परिणाम में पश्चिमी चिन्तक बौखला उठे और फिर पूरी ताक़त और पूरे जोश के साथ रूढ़िवाद (Orientalism) के विषय से इस्लाम के इतिहास और इस्लामी इल्म व फ़न पर टीका–टिप्पणी का दौर शुरू हुआ। लेकिन इस्लामी दुनिया और ख़ासकर एशिया से इसका भरपूर बचाव किया गया जिससे पश्चिम ने अपनी पॉलिसी पर दोबारा नज़र डाली और मुसलमानों के इतिहास व इल्म के स्तर पर भी निशाना लगाया। इसीलिये इस नज़रिये को पूरी ताक़त के साथ लागू करने की मुहिम चलायी गयी और साथ ही ईसाई कट्टरपंथियों को फ़रेबी नारे और इस्लाम के फ़र्ज़ी ख़तरे के नाम पर अपना साथी बना लिया गया। और फिर "Clash of The Civilization And Remark of The World Order" के नाम से एक किताब लिखी गयी जिसमें इस्लामी शिक्षाओं पर बहुत सख़्त हमले किये गये और इस्लाम को यूरोप के लिये एक गंभीर ख़तरा बताया गया। इस किताब के प्रचार व प्रसार में भरपूर मेहनत की गयी। इसके बाद से इस्लामी सभ्यता व संस्कृति और इस्लामी मूल्यों को खुलकर निशाना बनाये जाना लगा और फिर यहीं से इस्लाम और पश्चिम में कशमकश का खुलकर आरम्भ हो गया।

इस कशमकश में सबसे पहले इस्लामी मूल्यों पर हमले किये गये और औरतों के अधिकारों, पर्दा, दाढ़ी, जिहाद इत्यादि से होता हुआ मामला आप स0अ0 की तौहीन तक पहुंचा और फिर आंहज़रत स0अ0 पर फ़िल्म बनाने और विभिन्न कार्टून बनाने का एक सिलसिला शुरू हो गया। इन सारे कामों का उद्देश्य मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुंचाना और इस्लामी मूल्यों व रिवायतों का शंकित करना था और इसका मक़सद केवल यही था कि इस्लाम और मुसलमान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शासन के योग्य न बन सकें।

पश्चिम को जब धार्मिक और सांस्कृतिक रूप से मनचाही सफलता नहीं मिली और उनके सभी हथकन्डे नाकाम होते दिखाई देने लगे, बल्कि खुद पश्चिम के कई हैसियत वाले लोगों ने इस्लाम की गोद में पनाह ली तो

पश्चिमी सहयूनी चिन्तकों का गुस्सा फूट पड़ा और उन्होंने मुसलमानों के ख़िलाफ़ ज़मीनी जंग शुरू कर दी जिसका आरम्भ फ़ारस में फ़ौज की तैनाती से हुआ। फिर ईराक़ और अफ़ग़ानिस्तान ने पश्चिम के अज़ाब झेले, फिर इन्डोनेशिया में बाली और स्पेन में मैड्रिड धमाके करवाकर एशिया और यूरोप में मुसलमानों के चारों ओर घेरा तंग करवाया जाने लगा।

सन् 2005 ई0 में टोनी ब्लैंक ले (Tony Blankley) नाम के एक कट्टरवादी सहयूनी ने (West's Last Chance) नामक एक किताब लिखी जिसमें उसने इस बात पर ज़ोर दिया कि इस्लाम पश्चिमी सभ्यता का ख़ात्मा चाहता है और उसे हर हाल में रोकना होगा। सभ्यता की इस कशमकश में पश्चिम के पास ये आख़िरी मौक़ा है और इस्लाम की रफ़्तार पर यहीं रोक लगाना ज़रूरी है वर्ना कुछ ही समय बाद यूरोप में मुसलमान बहुसंख्यक होंगे और फिर पश्चिमी मूल्यों को बचाना असम्भव हो जायेगा। इस नज़रिये को इतनी सख़्ती के साथ पेश किया गया कि पश्चिम के लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या इस्लाम और उसकी बढ़ती हुई प्रसिद्धि से भयभीत हो गयी और मुसलमानों से उन्हें एक डर से लगने लगा जिसे खुद उन्होंने इस्लामोफ़ोबिया (Islamophobia) का नाम दिया।

आज यूरोप से इस्लामी सभ्यता का ख़ात्मा पश्चिम का सबसे बड़ा चैलेंज बन चुका है। लेकिन मुसलमानों के इनख़्ला से यूरोप और अमरीका में लेबर पावर का ख़त्म होना भी यक़ीनी है। इसीलिये ये पॉलिसी अपनायी गयी कि मुसलमान यूरोप में रहें लेकिन इस्लामी सभ्यता को यंहा से जाना होगा। इसलिये कि ये कार्यप्रणाली अपनायी गयी कि मुसलमानों (जो शक्ल व सूरत से मुसलमान दिखते हों) के यूरोप में दाख़िले पर पाबन्दी लगा दी जाये, इसलिये वहां वीज़े के क़ानून सख़्त किये गये, स्क्रीनिंग मशीन और आंतकवाद की आड़ लेकर रुकावटें शुरू की जाने लगीं, पहले से मौजूद इस्लाम पसंदो को बेबुनियाद मामलों में फ़साकर और कभी ज़बरदस्ती जेलों में डाला जाने लगा। ब्रिटेन में परहेज़गार मुस्लिम छात्रों के सामने बहुत सी मुश्किलें खड़ी की जाने लगीं, और फिर ख़ासकर फ़्रांस में पर्दे और दहशतगर्दी के नाम पर मुसलमानों को परेशान किया जाने लगा। इसके अलावा ब्रिटेन में "Prevent Campaign" के नाम से एक मुहिम भी शुरू की गयी जिसके तहत मुसलमान नौजवानों की जासूसी की जाती है और उन्हें ईसाईयत से क़रीब करने का जतन किया जाता है। इस मुहिम के डायरेक्टर का कहना है कि हमारा मक़सद मुस्लिम नौजवानों को कट्टरवादी शिक्षा से रोकना है।

एक ओर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस्लाम के ख़िलाफ़ प्रोपगन्डा किया जा रहा है और उसको मानवता के ख़िलाफ़ एक ख़तरा बताया जा रहा है और दूसरी ओर इस्लाम की बढ़ती प्रसिद्धि से हर पढ़ा–लिखा वर्ग ये सोचने पर मजबूर हो गया है कि सच्चाई को छिपाने की कोशिश की जा रही है और यही उनके इस्लाम से नज़दीक होने का कारण भी बनता है।

पश्चिमी चिन्तकों को इस बात का यक़ीन है कि केवल इस्लाम ही धार्मिक व सांस्कृतिक रूप से दुनिया पर शासन कर सकता है और यहूदियत व ईसाईयत इसकी ज़मीनी व आसमानी शिक्षाओं के सामने ख़ाक की हैसियत भी नहीं रखते हैं। लेकिन ये उसी समय संभव होगा जब खुद मुसलमानों को इसका एहसास हो और वो धार्मिक व व्यवहारिक मूल्यों पर इस अन्तर्राष्ट्रीय अधिपत्य के तैयार हों वरना इस्लामी शिक्षाओं की हैसियत केवल बेहतरीन दृष्टिकोण से अधिक कुछ भी नहीं।

सम्पादकीय नोट

सम्मानीय पाठको!

अरफ़ात किरण एक शैक्षिक व वैचारिक मासिक पत्रिका है जो निरन्तर पांच सालों से पाबन्दी के साथ प्रकाशित हो रहा है। यक़ीनन इसके प्रकाशन में सबसे बड़ा हिस्सा आप ही का है, लेकिन हमारे पाठकों की एक बड़ी संख्यां ऐसी भी है जिनकी वार्षिक सहयोग राशि किसी कारणवश हम तक नहीं पहुंच सकी। हमारा आपसे निवेदन है कि अपनी वार्षिक सहयोग राशि भेज दें ताकि संस्था आर्थिक संकट से बच सके। सहयोग राशि न मिलने की स्थिति में पत्रिका का अगला अंक आपने नाम नहीं भेजा जा सकेगा।

सम्पर्क करें: 9918385097, 8604566101

एक अक्सीर अमल

१— एक बार आप स०अ० की ख़िदमत में फ़क़ीर व मुहाजिरीन हाज़िर हुए और अर्ज़ किया:

"या रसूलुल्लाह स०अ० मालदार बुलन्द दर्जे ले गये।"

आप स०अ० ने पूछा क्यों?वो लोग बोले, नमाज़ों में वो लोग हमारे शरीक हैं, लेकिन मालदार होने की वजह से वो लोग सदक़े करते हैं, गुलाम आज़ाद कर सकते है और हम ये काम नहीं कर सकते है।

आप स०अ० ने फ़रमाया मैं तुम्हें ऐसी चीज़ बताता हूं जिस पर अमल करके अपने पहलों और बाद में आने वालों से बढ़ जाओ और कोई शख़्स तुमसे उस वक़्त तक न बढ़ेगा जब तक वो यही अमल न करे। सहाबा ने अर्ज़ किया, ज़रूर बताइये, आप स०अ० ने इरशाद फ़रमाया:

"हर नमाज़ के बाद सुब्हानल्लाहि, अल्हम्दुलिल्लाहि, अल्लाहु अकबर तैतींस—तैतींस बार पढ़ लिया करो।"

उन लोगों ने शुरू कर दिया। मालदारों को मालूम हुआ तो उन्होंने भी ये अमल शुरू कर दिया। फ़क़ीर दोबारा हाज़िर हुए और कहा या रसूलुल्लाह स०अ० हमारे मालदार भाई भी यही पढ़ने लगे तो आप स०अ० ने फ़रमाया कि ये अल्लाह का फ़ज़ल है जिसको चाहे अता करे।

मौलाना मुहमद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME-05

ISSUE: 12

December 2013

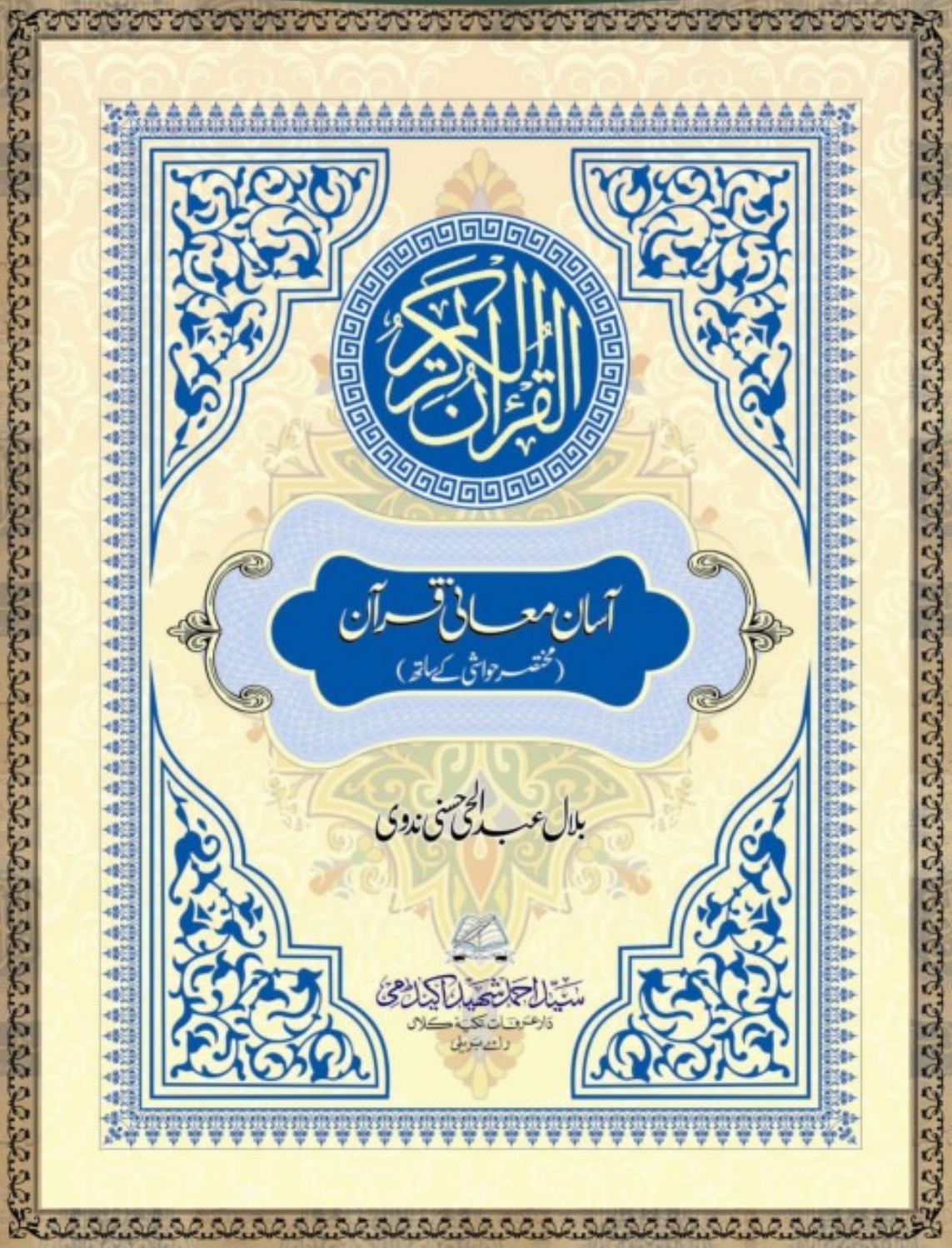

Sayyid Ahmad Shaheed Academy (Contact: 9919331295)

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.